ISSN : 23202467

युगान्तर

अन्तरराष्ट्रीय शोध पत्रिका

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका

हेड ऑफिस : ए–5, क्रिश्चियन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

मो॰ 9455251733, 9918156392, Website: www.theyugantar.in

Email: akhilesh_tiwari1979@yahoo.com, santoshtiwari05712@gmail.com

वर्ष 2022 – अंक 44
मार्च 2022

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
(A Peer-Reviewed Research Journal)
यू.जी.सी. द्वारा अनुमोदित पत्रिका सं. 64649

ISSN : 2320-2467

संपादक : संतोष कुमार तिवारी

प्रधान–सम्पादक : हरि प्रकाश शुक्ल

सह–सम्पादक : प्रो. आनंद प्रकाश त्रिपाठी, डॉ. हरि सिंह गौर – केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सम्पादक मण्डल :
प्रो. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी (पूर्व कुलपति) – संस्कृत विश्वविद्यालय, उज्जैन
प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी (पूर्व कुलपति) – संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. हुकुम चन्द, विभागाध्यक्ष, संगीत, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
डॉ. कमलेश कुमारी
प्रो. बी.एन. भालेराव – दिल्ली
डॉ. रुचिरा डिंगरा – दिल्ली
डॉ. ललिता त्रिपाठी – भोपाल
डॉ. कविता भाटिया – दिल्ली
डॉ. सीता लक्ष्मी – विशाखापट्टनम्
डॉ. आचार्य एस. शेपारत्नम् – आंध्र विश्वविद्यालय
डॉ. प्रतिभा पांडे – मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
प्रो. आभा रूपेन्द्र पाल –पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़
प्रो. शुभ जोहरी – आर.टी.एम. विश्वविद्यालय, नागपुर
प्रो. जे.पी. मिश्रा – रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर
डॉ. शिवदयाल सिंह – महर्षि विश्वविद्यालय, अजमेर
डॉ. मो. शाकिर शेख – विभागाध्यक्ष, पूना कॉलेज
डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा – विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
डॉ. राकेश राणा, एमएमएच पीजी कॉलेज, गाजियाबाद
डॉ. रेखा अरोड़ा – दिल्ली

प्रमुख प्रवासी सम्पादकीय सलाहकार समिति :
डॉ. विजय कुमार मेहता – अध्यक्ष, अखिल विश्व हिन्दी समिति, न्यूयॉर्क, अमेरिका
प्रो. सत्येन्द्र श्रीवास्तव – कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, कैम्ब्रिज (यू.के.)
डॉ. शेर बहादुर सिंह – विश्व हिन्दी सेवी, न्यूयॉर्क, अमेरिका
डॉ. पद्मेश गुप्त – अध्यक्ष, यू.के. हिन्दी समिति, लंदन
डॉ. सुषमा बेदी – कोलम्बिया युनिवर्सिटी, न्यूयॉर्क
प्रो. हेमराज सुन्दर – महात्मा गांधी संस्थान, मोका, मॉरिशस
स्नेह ठाकुर – संपादक वसुधा, टोरण्टो, कनाडा
उषा राजे सक्सेना – उपाध्यक्षा, यू.के. हिन्दी समिति, लंदन
डॉ. सुरेश चन्द्र शुक्ल – अध्यक्ष इण्डो नाईजीरियन सूचना एवं सांस्कृतिक मंच
डॉ. ऊषा देवी शुक्ला – डर्बन विश्वविद्यालय, डर्बन (दक्षिण अफ्रीका)
अपर्णा क्षीरसागर – डॉफिन विश्वविद्यालय, पेरिस, फ्रांस

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका

हेड ऑफिस : ए–5, क्रिश्चियन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

मो॰ 9455251733, 9918156392, Website: www.theyugantar.in

Email: akhilesh_tiwari1979@yahoo.com, santoshtiwari05712@gmail.com

डॉ. घनश्याम शर्मा – वेनिस विश्वविद्यालय, इटली

रामप्रसाद भट्ट – हैम्बर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी

डॉ. पूर्णिमा बर्मन – यू.ए.ई.

प्रो. तजेन्द्र शर्मा – अमेरिका (यू.के.)

इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व लेखकों का है। आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों की अपनी अभिव्यक्ति है। युगांतर अन्तर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका अथवा सम्पादक मण्डल का उनसे सहमति होना आवश्यक नहीं है। युगांतर शोध–लेख, मूल प्रकाशन एवं मंगवाने हेतु निम्न पते पर सम्पर्क करें। (कृपया लेख ई–मेल के माध्यम से ही स्वीकार किया जायेगा।)

Editor in Chief

युगांतर शोध–पत्रिका

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृ.सं.
1.	देशज भील संस्कृति पर वैश्वीकरण का प्रभाव – डा. लोकेश पारगी	**1-2**
2.	नगरीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव – डॉ. धर्मेन्द्र कुमार भाभोर	**3-7**
3.	India's Foreign Policy In Vajpayee Era - Anuradha	**8-10**
4.	Study on Rural Unemployment and Poverty in Agriculture Sector of Haryana - Paramjeet Singh	**11-16**
5.	पंचायत समिति कुशलगढ़ में जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना की प्रवृत्ति 1961–1991 – डॉ. कल्याणमल सिंगाड	**17-25**
6.	Khushwant Singh's Perspectives on Partition - Dinesh Chandra Rawat	**26-31**
7.	भारत में ग्रामीण साख प्रदान करने वाली संस्थाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन – डॉ. प्रहलाद सिंह	**33-37**
8.	संस्कृत साहित्य और रामकाव्य – डॉ. मीना	**38-42**
9	''भक्ति आंदोलन व सामाजिक सुधार आंदोलनों का समाज पर प्रभाव'' – डॉ. श्रवण कुमार बरोड	**43-44**
10.	संत नितानन्द का नारी चिन्तन – डॉ. कृष्णा मल्हान	**45-47**
11.	Role of Indian Investors in Indian Stock Markets - Dr. Suman Ahlawat	**48-52**
12.	बाल अपराध – परिवार एवं साथी समूह की भूमिका – डॉ. हेमलता माहवार	**53-55**

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

देशज भील संस्कृति पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डा. लोकेश पारगी
प्राचार्य
श्रीयोगेश्वर स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
सज्जनगढ़ जिला बांसवाड़ा

वर्तमान युग वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण व उत्तर आधुनिकता का युग है। इस युग में विश्व की सभी संस्कृतियाँ एक दूसरे के सम्पर्क में आ रही है। एक–दूसरी संस्कृतियों से प्रभावित हो रही है। जहाँ विश्व के सभी देशों में भूमण्डलीकरण प्रभावी हो रहा है, वहीं भारत में भी 1991 से दस्तक दी है और हर वर्ग, समाज एवं संस्कृति को प्रभावित किया है। आदिवासी भील संस्कृति भी भूमण्डलीकरण से प्रभावित हो रही है।

आदिवासी भील संस्कृति वर्तमान दौर में सवंमित हा रही है। भारतीय इतिहास की सदियों पुरानी आदिवासी एवं कृषक सांस्कृतिक परम्पराओं का मिला –जुला स्वरुप दक्षिणी राजस्थान के भीलों में देखा जा सकता है पर भील जनजाति आज ऐसे मोड पर खड़ी है जो सामाजिक गतिशिलता की ओर अग्रसर है। इस समाज में पिछले दो–तीन दशको से बहुत बड़ा परिवर्तन होता दिखाई दे रहा है। संचार,आवागमन, शहरीकरण, आधुनिकीकरण, उदारीकरण, भूमण्डलीकरण, शिक्षा, योजनाबद्ध विकास कार्यक्रम, औद्योगिकरण एवं वैश्वीकरण ने इनके जीवन में आमूल–चूल परिवर्तन के अवसर पर उपस्थित किये है।

आज भारत में ही नही बल्कि पूरे विश्व में उदारीकरण, बाजार अर्थव्यवस्था, आर्थिक सुधार तथा भूमण्डलीकरण के नाम पर एक नई पूंजीवाद, साम्राज्यवादी एवं उपनिवेशवादी विश्व व्यवस्था का अभियान चल रहा है। भूमण्डलीकरण वर्तमान समय के व्यापारिक माहौल की ऐसी अवधारणा है जो पूरे विश्व को एक मंडल, एक केन्द्र बनाने की बात करती है। आज भूमण्डलीकरण प्रत्येक क्षेत्र का मुख्य विषय बन गया है क्योंकि इसने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है।

भूमण्डलीकरण '' वसुधैव कुटूम्बकम'' की अन्तःप्रेरणा से अनुप्रेरित नही है बल्कि बाजार की बेलगाम शक्तियों के सहारे पश्चिम के प्रभुत्ववादी मंसूबे को ही पुरा करने की एक चतुर प्रक्रिया है। इसने अर्थव्यवस्था , राजनीजि, तकनीक, संस्कृति, शिक्षा हर क्षेत्र को व्यापक रुप से अपनी चपेट में ले लिया है। आज भारत में ही नही बल्कि पूरे विश्व में भूमण्डलीकरण के नाम पर एक नई पूंजीवादी, साम्राज्यवादी, विश्व व्यवस्था का अभियान चल रहा है। किसी वस्तु, सेवा, विचार, पद्धति अथवा सिद्धान्त का विश्वव्यापी बनाना ही उस वस्तु, सेवा, विचार, पद्धति अथवा सिद्धान्त का वैश्वीकरण कहलाता है।

यदि हम अवलोकन करे तो पाते है कि बाजार की नीतियां सभी स्थानो पर लागु होती है चाहे देशज लोग ही क्यों न हों। भूमण्डलीकरण ने भील संस्कति के रीति–रिवाज, प्रथाओं , कानुनों, नियमों, खान–पान मूल्य विश्वास एवं लौकाचार आदि को प्रभावित किया है। नवीन संचार, यातायात एवं औद्योगिकरण के परिणामस्वरुप आधुनिक समय में जनजातियों की सामाजिक व सांस्कृति स्थिति में अनेक परिवर्तन हुए है। ईसाईयों के सम्पर्क के कारण इनमें, परिवार , विवाह–गौत्र व नातेदारी की व्यवस्था में भी परिवर्तन हो रहे हैं। सामाजिक स्तरीकरण में भी परिवर्तन हुए हैं। पहले इनमें स्तरीकरण प्रस्थिति–प्रदत था। अब शिक्षा, योग्यता, धनार्जन, व राजनैतिक स्थिति आदि के आधार पर व्यक्ति की स्थिति समाज में उत्पन्न होने लगी है। औद्योगिकरण व आधुनिकीकरण ने जनजातियों के आर्थिक जीवन को भी प्रभावित किया है। आजकल कृषि के क्षेत्र में भी यंत्र, खाद, बीज आदि का प्रयोग हो रहा है।

भील संस्कृति के विभिन्न पहलुओं पर वैश्वीकरण का प्रभावः–

वैश्वीकरण के दौर में जनजातीय जीवन शैली, सामाजिक, आर्थिक, राजतीतिक, धार्मिक सांस्कृतिक एवं चिकित्सा व्यवस्थाएं परिवर्तन हो रही है। वैश्वीकरण ने भील जनजाति पर नकारात्मक प्रभाव भी डाला है। आज यह समाज शहरी चकाचौंध एवं तड़क– भड़क के प्रभाव से तथा आजीविका की तलाश में शहरों की और पलायन करने लगा है। आज वे स्वंय की संस्कृति ,लोकगीत,प्रथा, परम्परा, रीति–रिवाज, कानून, ललितकला, नृत्य संगीत कला के साथ –साथ नवीन संस्कृति को अपना रहे है, इससे उनकी संस्कृति मिली–जुली संस्कृति का रुप धारण कर रही है। बाजार शक्तिशाली हो गये है। बाजार की सीमाएं बढ़

गई है। आज बाजार के सूदूर गांवों में भी **पेप्सी, कोका –कोला, थम्सअप का मिलना, बॉलीवुड की फिल्में देखना। आज सामाजिक व्यव्यथा में भी कम्प्यूटर, इन्टरनेट, मोबाईल, रहन–सहन, खान–पान आदि का प्रभाव देखने को मिलता है।** सांस्कृतिक क्षेत्र में भी जनजाति के परम्परागत **लोकगीत, लोकनृत्य साप्ताहिक हाट, पारम्परिक वेशभूषा में बदलाव में वस्तुतः स्थानीय समाज में पहचान का संकट खड़ा कर दिया है।**

वैश्वीकरण और पाश्चात्यीकरण से सांस्कृतिक परिपेक्ष्य में परिवर्तन हुआ है। ग्लोबल विलेज के नाम पर संस्कृति को छिन्न–भिन्न करने की कोशिश हो रही है। भारतीय समाज के सभी प्रतिमान परिवर्तन के दौर से गुजर रहे है। **आधुनिक परिवर्तनों ने लिव इन रिलेनशिप, सैरोगेटमदर, समलैंगिक विवाह** जैसी अवधारणाएं विकसित की जिन्होने बिना विवाह किये स्वैच्छा से निर्मित एकल अभिभावक परिवार प्रस्तुत किया जो परिवार का गैर संगठनात्मक स्वरुप है।

उपसंहारः– अब एलुमिनियम और जर्मन सिल्वर के बर्तन गांव के करीब परिवारों में बहुत पंसद किये जाने लगे है। चाय का काफी प्रचलन हो गया है। शकुन, विचार, संरक्षात्मक जादूमंत्र और तंत्र का उपयोग बीमारी और कठिनाई को भगाने के लिये अभी भी होने लगा है।

जड़ी–बूटीयों को बुखार या अन्य आम रोगों में सेवन करने की पुरानी परम्परा जीवित है किन्तु जब बीमारी गंभीर रुप धारण कर लेती है तो रोगी को शहर के अस्पताल में भर्ती करा दिया जाता है। कुछ दशकों पहले इंजेक्शन से जितना डरा जाता था उतना ही आज इनकी मांग बढ़ रही है क्योंकि यह माना जाता है कि उनसे सभी प्रकार के रोगों में तुरन्त और निश्चित लाभ पहुंचता है।

युवा व्यक्तियों में जिन्होने शिक्षा पाई है या जिनका शहरों से सम्पर्क है, शहर जाने की इच्छा की अभिव्यक्ति होने लगी है। जाति पारंपरिक धर्म का एक अंग और उसी से अनुशासित बनी हुई है, फिर भी इनके व्यावसायिक स्वरुप में अन्तर आया है। अब लोग मजुदरी के साथ–साथ नये व्यवसाय अपनाने लगे है। नये सामाजिक–आर्थिक कारकों के प्रभाव स्वरुप पारिवारिक बंधन कमजोर पड़े है। संस्कारों –विशेषकर विवाह और मृत्यु भोजों पद दिखावे का व्यय बहुत बढ़ गया है। दहेज की मांगे बढ़ रही है गहने कपड़े के साथ–साथ अब टी.वी. स्कूटर आदि भी दहेज के अंग बनते जा रहे है। सामुहिकता के क्षेत्र सिकुड़ते जा रहें है।, वैश्वीकरण व भूमण्डलीकरण के कारण सामूहिक भावना का ह्रास हो रहा है नये परिवेश में यह शायद अनिवार्य है। कमी सिर्फ यह है कि सामुहिकता के नये आधार विकसित नही हो रहे है इनके अभाव में समाज को स्वच्छंद और नैतिकता विहीन व्यक्ति केन्द्रिकता के दुष्परिणाम भुगतने पड़ सकते है।

संन्दर्भ ग्रंथः–

1. टी.बी.नायक (1956): द भील्स– ए स्टडी, भारतीय आदिम जाति संघ, दिल्ली पृ. 11
2. नरेन्द्र व्यास (1979): भील सांस्कृतिक परिपेक्ष्य में, माणिक्यलाल वर्मा आदिम जाति शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर, राज. पृ. 10
3. डा.शम्भुलाल दोसी (1992): राजस्थान की अनुसूचित जनजातियाँ , हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर पृ. 1 से 22, 42 से 51
4. डा. नीरजा भट्ट (2007): 18वीं , 19 वीं शताब्दी में राजस्थान का भील समाज, हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर पृ. 1 से 18
5. डा. अजयसिंह राठौड़, (1994) : भील जनजाति शिक्षा और आधुनिकरण, पंचशील प्रकाशन, जयपुर पृ. 22 से 30
6. काबरा, कमल नयन– भूमण्डलीकरण, विचार नीतियाँ और विकल्प
7. सिन्हा, सच्चिदान्द – भूमण्डलीकरण की चुनौतियाँ।

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

नगरीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव

– डॉ. धर्मेन्द्र कुमार भाभोर
गुरुकुल पीजी महाविद्यालय बोरी
डूंगरपुर, राजस्थान

नगरीकरण को विकास के प्रतीक के रूप में वर्णित किया जाता है। वास्तव में नगरीकरण वह प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत *नगरों का अधिकतम विकास एवं विस्तार हो रहा है तथा आर्थिक क्रियाओं का केन्द्रीकरण हो रहा है ।*

नगरीकरण का एक कारण जनसंख्या की तीव्र वृद्धि एवं नगरों में नियोजन की अधिक संभावनाओं के कारण उनमें जनसंख्या का केन्द्रीकरण होता जा रहा है, साथ ही उद्योग, परिवहन आदि का भी वहाँ अत्यधिक प्रभाव होता है, फलस्वरूप पर्यावरण पर उसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। नगरीकरण एक वैश्विक परिर्वतन है। नगरीकरण शहरो का भौतिक परिवर्तन हैं या अन्य शब्दों में जनसंख्या का शहरो में केन्द्रीकरण हैं। शहरी क्षेत्रो कि सीमा और घनत्व में वृद्धि के कारण शहरीकरण होता है। नगरीकरण का प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि एंव शहरो में रोजगार की संम्भावना के उद्धेश्य से ग्रामीण क्षेत्रों के लोगो का शहरो मे प्रवास हैं। शहरीकरण के कारण शहरों का विकास ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना अधिक तेजी के साथ हो रहा है। भारत में अनियंत्रित शहरीकरण के कारण अनेक पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं का भी जन्म हो रहा है जैसे शहरो में स्थापित उद्योगों से होने वाली वायु, ध्वनि, जल प्रदूषण शहरो में जनसंख्या घनत्व में वृद्धि के कारण वाहनो की संख्या में और औधौगिक इकाईयों में वृद्धि हुई है। इसके कारण वायु प्रदूषण तेजी से बढ़ रहा हैं। अतः हमें इस अनियंत्रित शहरीकरण पर रोक लगाने की ओर कदम उठाना चाहिए जिससे पर्यावरण पर पड़ने वाले बुरे प्रभाव को रोका जा सकता है।

प्रस्तावना

वास्तव में ग्रामीण अंचल जहाँ शुद्ध पर्यावरण का प्रतीक है वहीं नगरीय या शहरीकरण के साथ पर्यावरण प्रदूषण जुड़ गया है जो पारिस्थितिक–संकट का कारण बनता है। प्रारंभ में नगर छोटे थे, उनका विस्तार सीमित था और वहाँ संपादित होने वाली आर्थिक क्रियाओं की संख्या सीमित थी जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण को किसी प्रकार का संकट नहीं था। शहरीकरण का तात्पर्य शहरो के भौतिक विकास में वृद्धि, शहरो में जनसंख्या का केन्द्रीकरण है। शहरीकरण आज विकास का साधन तो है परन्तु साथ ही साथ यह एक वैश्विक आर्थिक, सामाजिक एंव पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न कर रही है।

विश्व के महानगरों की समस्याओं का चित्रण संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट में इस प्रकार हल किया गया है– "हाल के दशकों में जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ शहरीकरण भी तीव्र हुआ है विश्व के 80 प्रतिशत लोग शहरी क्षेत्रों में निवास करते हैं।''

यदि यह प्रवृत्ति जारी रही तो लगभग अर्द्ध शतक की अवधि में शहरीकरण अपनी चरम सीमा पर पहुँच जायेगा तथा अधिकांश लोग कस्बों और शहरों में रहने लगेंगे। विकासशील देशों में शहरीकरण की दर और भी तीव्र है। राष्ट्रीय आकलनों के अनुसार अमेरिका से इतर देशों में वर्ष 1920 में शहरी आबादी एक करोड़ थी। वर्ष 2000 तक यह 20 गुना हो गई ।

विकसित देशों में शहरी आबादी में चार गुना वृद्धि होगी। शहरी क्षेत्रों में जल, वायु तथा भूमि प्रदूषण की अभिवृद्धि की ऐसी विश्वव्यापी समस्या बन गई है जिससे मानव स्वास्थ्य को खतरा है। औषध विज्ञान में हुई प्रगति के बावजूद विकासशील देशों में शहरी जीवन से संबंधित बीमारियों में अभिवृद्धि हुई है। नगरीय स्थलों की अति संकुलता सामान्य बात है।

आवास स्थानों की अपर्याप्तता निम्न कोटि के आवासों के निर्माण को प्रोत्साहन देती है तथा जल प्रदाय एवं अपशिष्ट समापन सुविधाओं की असंतृप्तेय आवश्यकताओं में वृद्धि करता है। कुपोषण होना असामान्य बात नहीं है तथा उसके साथ–साथ अंतड़ियों का संक्रमण इन अस्वस्थ परिस्थितियों में जन्मे तथा पले नवजात शिशुओं की मृत्यु का एक सामान्य कारण होती है। कुछ विकासशील देशों में इस

समस्या का परिणाम इतना विस्तृत है कि उसके सुलझने की कोई आशा तब तक नहीं है जब तक कि वृहद् राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास नहीं होते हैं।

शहरी क्षेत्रों की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 23.24 प्रतिशत हो गई है। शहरी जनसंख्या में वृद्धि दर 41.84 प्रतिशत एंव ग्रामिण जनसंख्या में वृद्धि दर केवल 17.78 प्रतिशत है। भारत में यदि शहरों की जनसंख्या में अभी जिस वृद्धि दर से वृद्धि हो रही है तो सन् 2050 तक शहरों की जनसंख्या दुगुनी हो जाएगी यह एक गंभीर समस्या की ओर ईशारा कर रही है। शहरीकरण विकसित देशो की तुलना में विकासशील देशों के लिए ज्यादा घातक सिद्ध होती है। शहरीकरण अनेक समस्याओं को जन्म देती है जैसे आवास, गर्मी, गंदी बस्ती का निमार्ण जल आपूर्ति कि समस्या। धूल, कचरे का निपटारा, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण भीड़–भाड़ आदि । यह सभी समस्या स्वास्थ को प्रभावित करता है।

शहरी क्षेत्र के मानक

- *भारतीय समाज में किसी क्षेत्र को शहरी क्षेत्र माने जाने के लिये आवश्यक है कि किसी मानव बस्ती की आबादी में 5000 या इससे अधिक व्यक्ति निवास करते हों।*
- *इस मानव आबादी में कम से कम 75% लोग गैर–कृषि व्यवसाय में संलग्न हों।*
- *जनसंख्या घनत्व 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. से कम नहीं होना चाहिये।*
- *इसके अतिरिक्त कुछ अन्य विशेषताएँ मसलन उद्योग, बड़ी आवासी बस्तियाँ, बिजली और सार्वजनिक परिवहन जैसी व्यवस्था हो तो इसे शहर की परिभाषा के अंतर्गत माना जाता है।*

भारत में शहरीकरण से संबंधित आँकड़े

- *आँकड़ों के अनुसार, वर्ष 2001 तक भारत की आबादी का 27.81% हिस्सा शहरों में रहता था। वर्ष 2011 तक यह 31.16% और वर्ष 2018 में यह आँकड़ा बढ़कर 33.6% हो गया।*
- *वर्ष 2001 की जनगणना में शहर–कस्बों की कुल संख्या 5161 थी, जो वर्ष 2011 में बढ़कर 7936 हो गई।*
- *भारत की शहरी आबादी का लगभग 17.4% झुग्गी–झोपड़ी में रहता है।*
- *संयुक्त राष्ट्र की एक नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में विश्व की आधी आबादी शहरों में रहने लगी है और वर्ष 2050 तक भारत की आधी आबादी महानगरों और शहरों में रहने लगेगी।*
- *भारत में शहरीकरण तेज़ी से बढ़ रहा है और वैश्विक स्तर पर भी तब तक कुल आबादी का 70% हिस्सा शहरों में निवास करने लगेगा।*

बढ़ते शहरीकरण का कारण

- *शहरीकरण के बढ़ने का एक प्रमुख कारण बेरोज़गारी है। शहरों में आने वाले लोगों में अधिक संख्या नौकरी की तलाश करने वालों की है, न कि बेहतर नौकरी पाने वालों की तथा बाहर से आने वालों में बेरोज़गारी की दर अपेक्षाकृत कम है।*
- *गाँव से शहरों की ओर पलायन का मुख्य कारण वेतन–दर तो है ही इसके अलावा दो अन्य प्रमुख कारण है– जोत की कम भूमि और परिवार का बड़ा आकार, शहरी प्रवासन के लिये जाति–प्रथा भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है।*
- द्वितीय विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप शहरी क्षेत्रों में तीव्र गति से सरकारी सेवाओं में विस्तार हुआ, जो गाँव से शहरों की ओर प्रवासन में एक प्रमुख उत्प्रेरक बना।
- औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरुप शहरी क्षेत्रों में भौतिक सुख–सुविधाओं में वृद्धि हुई।
- शहरी क्षेत्रों में बेहतर बुनियादी सुविधाएँ जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य और परिवहन की सुगम व्यवस्था आदि।

- कृषि में होने वाले नुकसान की वज़ह से लोग कृषि छोड़कर रोज़गार की तलाश में शहर आते हैं। कृषि मंत्रालय के मुताबिक़ खेती पर निर्भर लोगों में से 40 फीसदी लोग ऐसे हैं जिनको अगर विकल्प मिले तो वे तुरंत खेती छोड़ देंगे। क्योंकि खेती करने में धन की लागत बढ़ती जा रही है।
- वर्ष 1990 के बाद निज़ी क्षेत्र का विकास हुआ। जिससे बड़े कारखाने व फ़ैक्टरियों का विकास शहरों तथा महानगरों में ही हुआ।
- ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में भारत के आर्थिक विकास के लिये शहरीकरण को लक्ष्य बनाया गया था।

इन सभी कारणों से शहरी जनसंख्या में अनियंत्रित वृद्धि हो रही है जो पर्यावरण पर विपरित प्रभाव डाल रही है। शहरीकरण में जागरूकता बढ़ाना क्यो आवश्यक है–

- वन्यजीवों को हो रहें नुकसान
- प्रदूषण की अधिकता एंव हमारे परिस्थितिकी तंत्र को हो रहे नुकसान
- कृषि योग्य भूमि की कमी
- शोर में वृद्धि
- सड़को में भीड़–भाड़
- शहरी क्षेत्रों की तुलना ग्रामीण क्षेत्रों के विकास की गति बहुत कम होना

भाहरीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव

पिछले कुछ दशको से शहरी जनसंख्या में लगातार वृद्धि हो रही है जिसके फलस्वरूप शहरी क्षेत्रों के साथ ग्रामिण क्षेत्रों की भी पर्यावरण दूषित हो रहा है। शहरीकरण के कारण औधोगिकीकरण का भी केन्द्रीकरण शहरी क्षेत्रो में हो रहा है। और शहर में अनेक पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न हो रही है– यहां के लोगो के लिए पेय जल की समस्या, औधोगिकीकरण एवं वाहनों की अधिकता के कारण वायु का विषैला होना और साथ ही साथ ध्वनि का प्रदूषण, गंदी बस्तियों का तेजी से निमार्ण, आवास की समस्या के कारण तेजी से वनों व खेती योग्य जमीन का तेजी से क्षरण, बढ़ती गंदगी के कारण नदी व भूमिगत जलों का भी तेजी से प्रदूषित होना इत्यादि गंभीर पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न हो रही है। जिसमें प्रमुख समस्याएं निम्नलिखित है–

वायु प्रदूषण – शहरीकरण के कारण लगातार शहरों में उद्योगों की स्थापना, वाहनो की संख्या में वृद्धि इत्यादि कारणों से शहरो में बहुत तेजी के साथ वायु का प्रदूषण हो रहा है। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण भारत में बड़े शहरों में से एक दिल्ली में लगातार कुछ वर्षो से वायु प्रदूषण एक गंभीर समस्या के रूप में उभर के सामने आई। यहां की हवा में रहने से अनेक स्वास्थ सम्बन्धी मानवीय रोगो में वृद्धि हो रही है। ठंड के दिनो में यहां की AQi~ 300+ रहती है, जो की प्रदूषित मानक स्तर के उच्चतम बिन्दु पर है।

जल प्रदूषण – शहरो में जनसंख्या के वृद्धि के कारण मानवीय अपशिष्ठो का नदियों में निष्कासन, गंदी नालियों का निर्माण, से जल प्रदूषित हो रही है साथ ही गंदे पानी का जमीन से रिसकर भूमिगत जलो में जाके मिलने से भूमिगत जल भी प्रदूषित हो रही है। भारत देश की राजधानी दिल्ली की प्रमुख नदी यमुना बुरी तरह से प्रदूषित हो चुकी है।

ध्वनि प्रदूषण – लगातार बढ़ती जनसंख्या, वाहनो की संख्या, औधोगिक उपक्रमो की स्थापना इत्यादि कारणों से शहरो में बहुत अधिक शोर शराबा बढ़ गई है जो कि मानवीय स्वास्थ पर विपरीत प्रभाव डालती है जिसमें चिड़चिड़ापन, सुनने की समस्या, उच्च रक्तचाप इत्यादि में वृद्धि हो रही है।

मानव प्रदूषण : मानव प्रदूषण का मुख्य कारण शहरीकरण है। जब मानव ने शहरों की स्थापना शुरू की और उद्योगो को लगाना शुरु किया, तभी से प्रदूषण का सूत्रपात होना शुरु हो गया था। शहरीकरण की कठोर वास्तविकता यह है कि कई खूबसूरत घाटियां, पहाड़, हिल स्टेशन और जंगल प्रदूषण के ढ़ेर में परिवर्तित हो गए हैं।

इंसान की ज़रूरतें दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही हैं और उन ज़रूरतों को पूरा करने के लिए हमने अपनी धरती माँ का खूब शोषण किया है। पेड़ों की कटाई, नदियों और झीलों का दूषित होना और प्राकृतिक भंडार का दुरुपयोग, शहरीकरण और औद्योगीकीकरण के प्रमुख दुष्परिणाम हैं।

नदी – सर्वाधिक पीड़ित

तेजी से हो रहे शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण पिछले कुछ वर्षों में नदियों पर प्रदूषण की मार ज्यादा बढ़ी है। सिंचाई, पीने, औद्योगिक उपयोग, बिजली इत्यादि के लिए पानी की उपलब्धता, चुनौती बन गयी है। नदियों के किनारे बसे शहरों से अनुपचारित अपशिष्ट जल का निर्वहन नदियों में प्रदूषण भार का प्रमुख स्रोत है।

दिल्ली विश्व के तेजी के साथ शहरीकरण में आगे बढ़ रहे शहरो में से एक है, जिससे साफ है कि शहरीकरण का प्रभाव किस प्रकार उस शहर के पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव डाल रही है।

स्पष्ट है कि तीव्र नगरीकरण से पर्यावरण की अनेक समस्याओं का जन्म हुआ है, किंतु इससे यह तात्पर्य नहीं है कि नगरों का विकास बुरा है या इसे रोका जाये। अपितु यह एक सतत् विकासशील प्रक्रिया है जिसमें अभिवृद्धि स्वाभाविक है, आवश्यकता है, उन उपायों को ढूँढने की, जिससे नगरीकरण के साथ–साथ पर्यावरण भी शुद्ध रह सके और पारिस्थितिकी–तंत्र में अवरोध उपस्थित न हो। इसके लिए आवश्यकता हैः

(क) नगरों का नियोजित विकास हो,

(ख) अनधिकृत बस्तियों का विकास न हो,

(ग) उद्योगों को नगरीय क्षेत्रों से दूर इस प्रकार स्थापित किया जाए कि उनका प्रभाव सीधा नगरों पर न हो,

(घ) जल–मल निकास एवं उसे शुद्ध करने की पर्याप्त समुचित व्यवस्था हो,

(ङ) महानगरों के स्थान पर मध्यम श्रेणी के नगरों का विकास किया जाए,

(ढ) वाहनों से होने वाले प्रदूषण पर नियंत्रण की व्यवस्था हो,

(च) नगरों में पार्कों का समुचित विकास हो,

(छ) नगरों के चारों ओर हरित पेटी का विकास हो एवं

(ज) उचित पर्यावरण प्रबंधन, निरंतर देखभाल एवं अनियमित कार्यों हेतु समुचित दण्ड की व्यवस्था आदि द्वारा नगरीकरण से पर्यावरण को होने वाली हानि से बचाया जा सकता है ।

निष्कर्ष

शहरीकरण से विकास तो सम्भव है किन्तु इसके अनियंत्रित विकास से पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का भी ध्यान देना आवश्यक है। शहरीकरण के कारण एक विशेष क्षेत्र में जनसंख्या घनत्व बहुत अधिक हो जाता है जो अनेक समस्याए उत्पन्न करती है। आज नतीजा यह है कि हम अत्यधिक प्रदूषित शहरों में रहते हैं, जहां दिन–प्रतिदिन जीवन तेजी से बदलता जा रहा है। हम इस शहरी प्रदूषण के कारण कई स्वास्थ्य मुद्दों का सामना करते हैं और सबसे बुरी बात यह है कि हमें इसका एहसास भी नहीं है। यही उचित समय है, इस प्रदूषण पर अंकुश लगाने और अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए एक बेहतर दुनिया बनाने के तरीकों को अपनाने की जरुरत है।

संदर्भ

1. Govt. of India, Census of India 2011
2. Rai M.S., (2016),"Impact of Urbanization on Environment", Reserch Trend
3. Kavita B.D., Smt N.K. Gayathri (2017)," Urbanization in India", IJSRE

4. https://geographyandyou.com/
5. https://www.sscollegejehanabad.org/
6. https://www.gkexams.com/
7. https://www.vokal.in/
8. https://hindi.indiawaterportal.org/
9. https://nios.ac.in/media/documents/srsec317newH/Ch-23.pdf
10. https://www.kailasheducation.com/2019/09/nagrikaranka-arth-paribhasha-visheshtaye-prabhav.html

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

INDIA'S FOREIGN POLICY IN VAJPAYEE ERA

- **Anuradha**

Abstract -

The oreign policy of India has always been continous with the control of the superpowers and always set the forign policy according to its national interests. Atal Bihari was a member of the Indian parliament for over five decades. Vajpayee took a deep interest in foreign affairs. Vajpayee led from the front in establishing India's nuclear credentials by conducting Pokharan -2 test in 1998.Although the test prouoked sanction from the United State ,Birten ,Japan, Jarmany etc.India's globel stature grew and withen a few years the world took cognizance of India's impeceable non-proliferation record. The test and ensuing sanctions triggered the longest diplomatic dialogue between India and US,lasting three years, which helped normalize relations.Vajpayee government improved india's ties with the People's Republic of Chine boosting trade and seeking the resolution of territorial disputes through dialogue. The Lahore declaration was second agreement between India and Pakistan to avoid a nuclear war.But this declaration was thrown into dustbin in the after Kargill war. Russian President Putin visit India .During this visit,both countries signed defence aggrement.Vajpayee encouraged investment for the country's economic progress and he talk about globalization.

Key words-IBSA-India –Brazil-South Africa,Implications,Self Moratorium, Condemend,Sanctions,Persuasion,Initiative,Coup.

Introduction -

Atal Bihari Vajpayee was an Indian politician who served three as the Prime Minister of India ,first for a term of 13 days in 1996,then for a period of 13 months from 1998 to1999, and finally, for a full term from 1999 to 2004. He was the first Indian Prime Minister who was not a member of the Indian National Congress party to have served a full five year term. .He was not only a consummate politician but also the most skillful diplomat the country has produced.Vajpayee took a deep interest in foreign affairs,forgoing close partnerships with global power.Key points of his foreign policy are:

- Pokharan 2 and its implications
- Normalization efforts
- Lahore declaration 1999
- Kargil war 1999
- Relation with United States
- Relation with China
- Relation with Russia
- Agra Summit 2001
- Strengthening relation with trade blocks

Pokharan 2 and its implications- Vajpayee government carried out two nuclear tests in deserts of Rajastan on 11 and 13 May 1998 .The Vajpayee government also declared that the test were conducted only as deterrenced and believed in the"no first

use" policy of nuclear weapons.India also imposed a self moratorium on nuclear tests with this.

Pakistan also carried out similar test in Baluchistan in the end of the month.[1]

The nuclear tests conducted by India and Pakistan not only escalated tension in South Asia but also raised concerns all over world .India was condemned by west, and imposed economic sanctions with this,economic and form US and other financial institutions stopped.[2]

Normalization efforts –

At pokharn,the government had flaunted its nuclear muscles but immediately there after ,it came under damage control mode. The doors of diplomacy were open from both Pakistan and United State sides.In 1998, India US engaged in a longest ever diplomatic dialogue between the two countries which extanded for three years from Indian side, this dialogue was led by Jaswant Singh. These negotiations helped to a great extent to normalize the relation between India-US.[3]

Lahore Declaration 1999- Under persuasion from United States, India and Pakistan agreed to resume talks to reduce tension. Initiative was taken by the Prime Minister Vajpayee in Feb 1999 took a bus to Lahore and signed Lahore declaration with Pakistan.[4]

The Lahore declaration propored several measure to restore confidence and normalize relations these included.

- Both countries would avoid nuclear arms race and accidental /unauthorized operational use of nuclear weapons.
- Both countries will avoid non-conventional and conventional confilicts.

Thus Lahore declaration was second agreement between India and Pakistan to avoid a nuclear conflict.[5]

However,soon Nawaj Sharif deposed by Parvej Musharraf in a coup and this declaration was thrown into dustbin in the ater the Kargil war.

Kargill war, 1999 –the Lahore peace process was derailed by intrusion of Pakistani troops in Kargil in Kashmir. The Kargill conflict led to a limited war between the two countries and this created uneasiness in the non-proliffication lobby, as it could transform into a ull scale nuclear war.[6]

The US and west indentified Pakistan as aggressor and condemned it. Nawaj Sharif was summoned to United State to withdraw troops from region. This was for the first time since world war 2 when United States showed a favourable stance on India . Finally ,the Pakistani troops hat to retreat from Kargill in July 1999 leading success of operation Vijay of Indian army.[7]

Relations with United State- In March 2000, US president Bill Clinton visited India as first president in22 years after president Jimmi Carter's visit in India 1978. During this visit a very comprehensive document "India Relation :A Vision for the 21st Century" was signed. This document declared that the head of government of the two nations would meet at least once a year to discuss bilateral matters and to sort out difrencs.With this several mechanisms such asUS – India finanacial and economic forum, US- India commercial issue , US – India working group on trade, US- India science and techonolgy forum etc were created. This was foundation on which India- US relation were built better in later years.[8]

Relation with China – In 2003,Chine officially recognized Indian sovereignty over Sikkim as the two countries movied towards resolving there border disputes.

Foundation of IBSA- In 2003 via the "Brasilia Declaration"IBSA dialogue forum was ormed . IBSA(India- Brazil- South Afrika(is a trilateral, development initive to promote South –South cooperation and exchange.[9]

Relation with Russia – In October 2000, Russian president Vladimir Putin visited India. During this visit , the two countries signed defence agreements for supply of arms and aircrafts. Next year , when Vajpayee visited Russia a Moscow Declaration was signed to start close cooperation in trade, security and political sphere.[10]

Agra Summit 2001- In July 2001, Parvej Musharraf visited India to normalize relations between two countries. Howere , the summit did not produce any positive outcome due to Musharaf's uncompromising attitude on the issue of Kashmir strengthening relation with trade blocks-Towards look east policy. Vajpayee visited Vietnam , Indonesia and signed trade and commercial agreement. Vajpayee agreement also established close trade relation with ASEAN which was hithertotitle connected with India in June 2000, first India EU summit took place in Lisbon.[11]

Conclusion-

The foreign policy of India was very successful in Vajpayee period. India's relation with other country improved in Vajpayee era.In this period India-US relation went ahead.An agreement signed with US.India emeraged as a power at the International lavel.

Amerika,Russia,Chine,Austrialia,Japan,Germany,travel to all the major country and take the relationship forward. Made the country self-reliant in the field of security.Progress in the economic field by entering into trade agreement with other country.

Endnotes

1. Sharma Vinod,Bhart ki Videsh Niti evm Anterrashtriy Smband,Rawat Publication, New Delhi,2012.
2. Dongra Geeta,Shakti Punj: Atal Bihari Vajpayee,Deepak Publicar,Jhalander,1998.
3. Malhotra A. P.,Bhartia Parmanu Shashtra, Rawat Publication, New Delhi, 2003.
4. Aadwani L.k.,Mera Desh Mera Jiwan,Prbhat Publication,New Delhi,2008.
5. Sharma S.K.,Prime Minister of India Nehru to Manmohan Singh 1947-2007,Anmol publication,New Delhi, 2007.
6. Ghatate N.M.,Decisive Days,Shipra Publication,Delhi,1999.
7. Dikshit J.N.,Bhart ki Videsh Niti or Enke Padosi,Ghayan Publication ,New Delhi,2005.
8. Upadhyay Archana,Bhart ki Videsh Niti or Anterrastriy Smband,Sanjya Publication,New Delhi,2005.
9. Shukla Subhash, Foreign Policy of India,Anamica Publication,New Delhi,2007.
10. Malhotra A.P.Bhartia Parmanu Shashtra,Rawat publication ,New Delhi,2013.
11. Murlidhar Sukumar,Date lock o Aagra,Fruntlinr Volume 18,No.17,18 July-3August2001,pp26-30.

Study on Rural Unemployment and Poverty in Agriculture Sector of Haryana

PARAMJEET SINGH
Assistant Professor of Economics
Govt. College of Women, Badhra
(Charkhi Dadri)

Abstract:

Haryana is the smallest state of India. The main profession of the people of Haryana is agriculture. Current paper is review paper in nature. Current situation of employment in India, economic profile of Haryana, causes of agriculture unemployment in Haryana and government policies for decreasing poverty and unemployment are mentioned in the paper.

Keywords: unemployment, Agriculture, population

Introduction:

Rural development in India is one of the most important aspects for growth. India is primarily a county built on agriculture. It contributes majorly on India's gross domestic product. For the growth in agriculture government plan many programs related to rural development in India for increasing growth in agriculture sector. All most every nation wanted to achieve healthy employment rate for its population. Unemployment directly affects the GDP of the country. The major factors that affect unemployment are economic crises. Implementing the policies that accelerate unemployment is economic crisis. But unemployment still remains intact in developing county like India. Many factors are working behind it.

Objective of the study:

1. To identify economic condition of Haryana
2. To identify the nature of unemployment in Haryana
3. To identify policies implemented to reduce unemployment

Economic state of Haryana:

Haryana State was appearing as a separate administrative entity on 01 Nov. 1996. It is one of the smallest states in India with 4.4 million hectares of land, forming 1.34% of the total geographical area of the country. It was separated from Punjab because of differentiation in languages. Haryana surrounded with national capital of Delhi from three sides. It is mainly an agricultural state with plentiful productive land. Agriculture sector of the state has benefited from the Green Revolution which took place in the state. Further, the state is home to many species of flora and fauna.

Haryana is an agricultural state having majority of the state's total geographical area under cultivation. The state possesses various agro-ecology and cropping pattern.

Haryana stood first in the production of basmati rice, pearl millet and mustard. Rice, wheat, pulses, cotton, sugarcane, pearl millet and rapeseed and mustard. The state contributes majorly to the Green revolution in the 1960's. According to census report of 1991-2001 about 71.07% of Haryana's population was living in rural area and his agricultural sector contributed 31.19% to net state domestic products. And in 2006-2007 the figure dropped to 21.45% shows decline in the agriculture and animal husbandry sector.

Haryana Population:

As per the report of census 2011, Haryana has population of 2.54 Crores, an increase from figure of 2.11 crore in 2001 census. Total population growth in 2011 was 19.90%while in 2001 it was 28.06% The population of Haryana form 2.09% of India in 2011, it was 2.06%.

Haryana literacy rate 2011:

Literacy rate in Haryana has seen upward trend and is 75.55% as per 2011 population census. Among that, male literacy was 84.06% while female literacy is at 56.91%. It was 76.10 for male and 59.61% for female in 2001.

Unemployment in Haryana:

The status of unemployment rate was estimated at 4.7% as compared to the all India level which was about 5% during the period 2015-16

Unemployment consist of various types like,

1. Seasonal Unemployment:

Normally we called the people employed when he works throughout the year, but it is not possible in all the sectors. In agriculture, work is seasonal although agriculture activates are performed throughout the year. When crop is ready for harvesting, more people require for work. Similarly in the sowing, weeding and transplantation period more labor is required. At this time employment increases, and there is hardly any unemployment. When the season is over these worker remain unemployed.

2. Voluntary Unemployment:

Voluntary unemployment is when people are not willing to accept the work at prevailing wage rate. It also includes those people who already have other source of income from their property or any other sources and need not to work.

3. Frictional Unemployment:

Frictional unemployment is the voluntary employment. It is attributable to the time required to match production activates with qualified resources. When worker choose to leave their job for searching new one constitute frictional unemployment. In case of agriculture sector, when workers are moving from production work to another work for seeking employment. During this period unemployment of the frictional range boost.

4. Causal Unemployment:

The casual unemployment occur when the worker is employed on a day – to – day basis like contractual job and have to leave it once the contract terminates. the casual unemployment is prevalent in industries which work on contract basis, such as building construction, agriculture etc. Casual unemployment result into more availability of workers than available job. It is affected with the economy. Lower demand of good, reduces customer spending and because of that company cutting down to the employment.

5. Disguised Unemployment:

When so many people working at one place, but actually they are not required. In agriculture all family members are working in farm but requirement is for 3 to 4 people. This may be because of more people are not able to find employment elsewhere, so instead of being unemployed they prefer to do the work with others.

Nature of unemployment in Haryana

As per the date released by the centre for monitoring India Economy for February 2021, Haryana has recorded the highest unemployment rate in the country. Its unemployment rate is 26.4% which is nearly four times the national average – 6.9%. Unemployment rate has risen after a significant drop in the state's unemployment figure in January 2021. In January it comes down to 17.7% from 32% in December 2020.

The lack of employment in the state is due to seasonal nature of agriculture in this region and acute water shortage. The region primarily grows mustard. It is short growing and harvest season and does not provide work throughout the year. Haryana is primarily depending upon seasonal rains, and lack of sufficient water supply hold back round the year farming.

Reasons of unemployment in Haryana:

The main reason of unemployment in Haryana is uneven development. After six five years of independence GDP growth rate is slow, the major reason responsible for that are:

1. Increasing population:

Population is the important cause of unemployment in Rural Haryana. In Haryana, mainly in rural area population increases. It has adversely affected the unemployment. Increase in Population directly affected to unemployment as it added in labor force, on the other hand job growth could never be that high. It also reduces resources for capital formation. high population occur high expenditure cost of living that reduces the opportunities of diverting a huge portion of income to saving and investment.

2. Limited land:

Land is a natural source and cannot be expand like population. Since, in Haryana population increases but land remain same. Because of that pressure on land increases. Rural people mostly depend on land for their livelihood. But it remains very limited in comparison to population. That results into unemployment situation for those who mostly depend on agriculture in rural area.

3. Seasonal agriculture:

For people living in rural area, agriculture is the only means of employment. People directly or indirectly depend upon agriculture. But in Haryana agriculture is basically a seasonal operation. It provides employment to them in monsoon only. Or at the time of sowing and harvesting. So after that or between that period people remain unemployed.

4. Division of Land:

Due to large population ration, land has been divided in Haryana. That affects the agriculture. As land has been divided into agriculture and for personal use, agriculture work has been affected and agriculture worker becomes unemployed.

5. Outdated method of agriculture:

In India method of agriculture is outdated. Rural farmers stuck into rural farming methods. As a result output of corps becomes less and they are not able to feed more people. It also affect their income results into they cannot provide their child proper education or engaged them in any profession.

6. Defective education:

The regular education patter in defective. The main aim is of education is just to get certificate. Education system is degree oriented rather than job oriented. So the people who did not get general education are not able to do work. For them getting employment is only through self – employment.

POLICIES IMPLEMENTED TO REDUCE UNEMPLOYMENT:

Government implemented various policies to increase employment opportunities. The policies briefly describe as below:

1. Integrated Rural Development Program (IRDP)

The program was launched in 1978 – 78 to eliminate poverty in the country. The program introduce for marginal farmer, agricultural workers, landless laborers and rural craftsmen and all the families having 5 person with annual income below 3500. Objective of the program is to raise the level of families living below poverty line by giving them employment opportunities.

2. Drought Prone Area Program (DPAP)

The program was initiated in 70 such districts of 13 state as were prone and drought. The program was successful in removing seasonal unemployment.

The estimated area treated under DPAP is given below:

Year	Area treated (in lakh hectares)
1995 -96	5.95
1996-97	5.50
1997-98	4.54
1998-99	3.65

1999-2000	3.66
2000-2001	7.50
2001-2002	5.44
2002-2003	6.56
2003-2004	7.35
2004-2005	7.49
2005-2006	8.10

In the sixth plan the program gives 17 crore and 70 lakh man – days of employment and 301 crore was made on the program.

3. Training for self – employment:

The program was launched on 15" August, 1979 by the government of India. It is called National Scheme of Training or Rural youth for Self Employment (TRYSEM). The main objective of the program was to reduce unemployment among the youth.

4. Jawahar Rozgar Yojana:

The yojana was started on 28th April, 1989. The aim of the program is to give employment from one member of each poor rural family for 50 to 100 days in a year at a workplace near his residence. Special feature of program is that 30% of the employment generated will be reversed for women. The central government will finance 80% of the program and 20% will be bare by state government for the expenditure of the program.

5. Employment in Foreign Countries:

Government helps people to get employment abroad. To recruit people in gulf countries special agencies have been set up.

6. Self – employment to educated unemployed Youth:

A scheme self – employment of educated unemployment was initiated in 1983. Under this scheme, loan of 25000 are given to educated unemployed. The scheme was implemented by District Industries Centers. 25 subsidies were also given by the government under the scheme.

7. Nehru Rojgar Yojana (NRY):

The yojana was initiated in 1989. Three schemes are under it. Under first scheme, subsidy is provided to under poor to establish micro enterprises. 1.25 lack families were benefited in 1995 under this program. Under second program scheme arrangement have been made for wage- employment to laborers in the cities with less than 10 lakh population by providing Indian Economic Development and elementary statistic them basic facilities.

8. Small and cottage industries:

To reduce unemployment, government has made special efforts to develop small and cottage industries. In 1995-96 about 33 lakh person were employed in these industries.

CONCLUSION:

Haryana is agricultural state. Most of the people here are engaged in agriculture. But it is true that India agriculture industry is purely depend upon rain. If there is less rain the farmer remains unemployed. A part from rain there are other causes of unemployment and those are more population, limited land, division of land, less education, outdated method of education etc. For improving condition of employment in India government also initiated many schemes which definitely affect the level of employment in India.

References

1. Consequences of unemployment in Haryana & its solution-Ignited minds journals. (n.d.). Ignited Minds Journals. https://ignited.in/p/78804
2. Dahiya, S. (2019). Consequences of Unemployment in Haryana & Its Solutions. Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education, 16(2), 209-213.
3. Pant, S.T. (2021, march 26). Haryana's unemployment rate highest in India: report / Gurgaon news – Times of India. The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/city/gurgaon/haryanas-unemployment-rate-highest-in- india-report/articleshow/81696626.cms
4. Progressive Haryana: economic Profile. (2019). PHD CHAMBER OF COMMERCE AND INDUSTRY.
5. Raheja, K. (2015). Rural Development in Haryana. International Journal of Scientific and Research Publications, 5(6).
6. Rani, P. (2019). Female Agricultual workers in Haryana: a study of Karnal district. International Journal of Research and Analytical Reviews, 6(1), 661 – 665.
7. Sharma, A. (2014). Performance of agriculture and allied sectors in Haryana. Journal of Economics and sustainable Development, 5(3), 39-45.
8. Singh, K., & Mann, V. (2020). A Discussion on Rural Development Strategies of Haryana. Asian Journal of Sociological Research, 3(1).
9. (n.d.). / NITI Aayog. https://niti.gov.in/planningcommission
10. gov.in/docs/reports/peoreport/cmpdmpeo/volume2/134.pdf

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

पंचायत समिति कुशलगढ़ में जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना की प्रवृत्ति 1961–1991

डॉ. कल्याणमल सिंगाड़ा
प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
भूगोल विभाग, राजकीय
महाविद्यालय सज्जनगढ़ (राज.)

1. महत्व –

व्यासायिक संरचना एवं विकास के बीच गहरा संबंध पाया जाता है। व्यवसायों को मुख्य रूप से तीन भागों में बांटा जाता है। व्यवसायों के आधार पर ही आज विश्व को विकसित एवं विकासशील देशों के समूह में रखा जाता है। हमारे देश की अर्थव्यवस्था अभी विकासशील है, क्योंकि देश की लगभग 64% जनसंख्या प्राथमिक क्रियाकलापों से अपनी जीविका चलाते हैं। किसी भी क्षेत्र में व्यावसायिक संरचना और विकास में घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। व्यावसायिक संरचना से ही प्रादेशिक असमानताओं को दूर किया जा सकता है। इनके उपयोग की योजना से क्षेत्र की अधिकतम जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध हो सकता है। कृषि के साथ पारिवारिक उद्योगों के विकास से लोगों की अर्थ–व्यवस्था सुदृढ़ होती है। आजादी के 60 वर्षों में राजस्थान का दक्षिण क्षेत्र जो जनजातीय बाहूल्य है, के वन क्षेत्र में कमी हुई है। सीमित कृषि भूमि ने बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि कर दी है। क्षेत्र विशेष के संसाधनों को पर्याप्त मात्रा में दोहन कर लोगों को अधिक से अधिक रोजगार उपलब्ध करवाया जा सकता है।

व्यावसायिक संरचना में कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों में किस प्रकार का स्वरूप है? भागीदारी का प्रतिशत कितना है?

कृषि के अतिरिक्त उद्योग धंधे व अन्य सेवाओं में लोगों की वृद्धि जिले की प्रगति को स्पष्ट करता है। वर्तमान समय प्रतिस्पर्धा का युग है। विकास के परम्परागत स्वरूप को ध्यान में रखते हुए भविष्य की संभावनाओं को ध्यान में रखकर व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन किये जाने होंगे। यह परिवर्तन कितनी मात्रा में व किस सीमा में हो रहे हैं? विश्लेषण किया जाना चाहिए।

2. अध्ययन के उद्देश्य –

1. कुशलगढ़ पंचायत समिति में कार्यरत जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना में खनन, पारिवारिक कुटीर व लघु उद्योग में लगे लोगों की संख्या में विगत 30 वर्षों में आये परिवर्तनों को ज्ञात करना।
2. इन उद्योगों में महिलाओं की भागीदारी ज्ञात करना।
3. कुशलगढ़ पंचायत समिति में खनन, पारिवारिक कुटिर व लघु उद्योग में लगी जनसंख्या के अनुपात का विश्लेषण करना।
4. इन उद्योगों में जनसंख्या की भागीदारी बढ़ाने की संभावनाओं को ज्ञात करना।

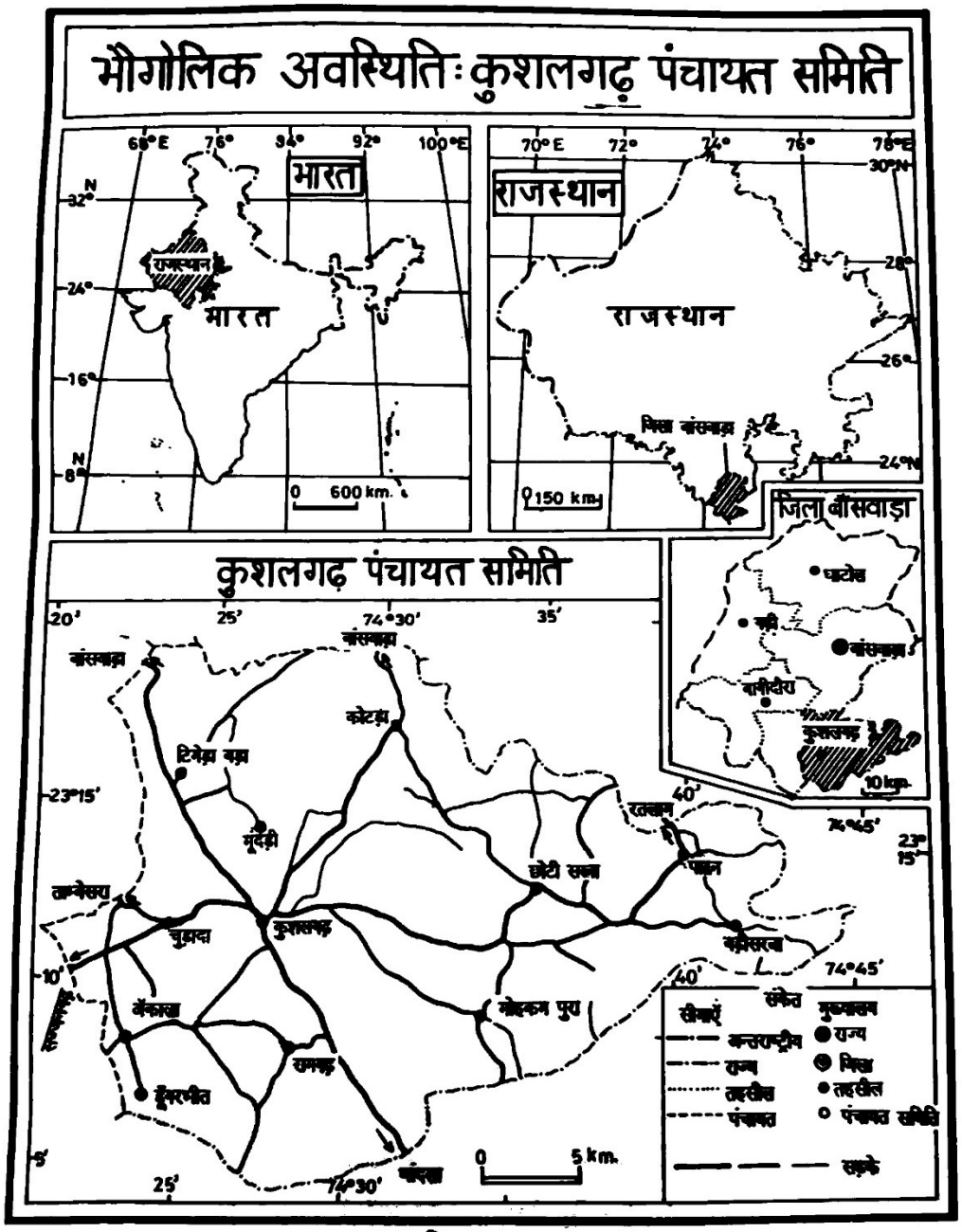

मानचित्र 2.1

3. आंकड़ों के स्त्रोत – प्रस्तुत अध्ययन में द्वितीय स्तर के आंकड़े सेन्सेस विभाग भारत सरकार द्वारा प्रकाशित जिला सेन्सस बुक वर्ष 1961, 1971, 1981 व 1991 के साथ सामान्य आर्थिक सारणियों को आधार माना गया है। सांख्यिकी विभाग, जिला कार्यालय बांसवाड़ा से सांख्यिकी रूपरेखा, जिला जनगणना पुस्तिका, टी.आर.आई. उदयपुर एवं व्यावसायिक संरचना के लिए राजस्थान आर्थिकी एंव सांख्यिकी एबस्ट्रेक्ट से प्राप्त किये गये हैं।

5. अध्यन क्षेत्र – राजस्थान के दक्षिण में जनजाति बाहुल्य कुशलगढ़ पंचायत समिति 639.86 वर्ग किलोमीटर में विस्तृत 23°5′ उत्तरी अक्षांश से 23°20′ उत्तरी अक्षंश तथा 74°22′ पूर्वी देशांतर से 74°45′ पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है।

2011 की जनगणना के अनुसार बांसवाड़ा जले की कुशलगढ़ तहसील की कुल जनसंख्या 3,79,232 है। इनमें 190,927 पुरुष हैं जबकि 1,88,305 महिलाएं हैं। यहां 2.8% लोग शहरी क्षेत्रों में जबकि

97.2% लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। शहरी क्षेत्रों में साक्षरता दर 86.3% है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता दर 46.1% है।

6. जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना की प्रवृत्ति – प्रादेशिक असमानताओं को दूर करने में उपलब्ध स्थानीय संसाधनों को आधार मानकर इनके उपयोग की योजना से अधिकतम जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध हो सकता है। कृषि के साथ ही अन्य व्यवसायों से अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होती है। राजस्थान के जनजाति बाहुल्य क्षेत्र में जहाँ आजादी के 50 वर्षों में वन क्षेत्रों में कमी होती गई है व सीमित कृषि भूमि में रोजगार के पर्याप्त अवसर नही होने से बेरोजगारी में रोजगार के पर्याप्त अवसर नहीं होने से बेरोजगारी की समस्या ने गरीब लोगों की संख्या में वृद्धि कर दी है। लोगों को अधिक से अधिक काम उपलब्ध हो तथा क्षेत्र विशेष के संसाधनों को पर्याप्त मात्रा में दोहन कर जीवन स्तर को उन्नत किया जा सकता है। व्यावसायिक संरचना में कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों में किस प्रकार का स्वरूप है? भागीदारी का प्रतिशत कितना है? कृषि के अतिरिक्त उद्योग धन्धे व अन्य सेवाओं में लोगों की वृद्धि क्षेत्र की प्रगति को स्पष्ट करता है। वर्तमान समय प्रतिस्पर्धा का युग है विकास के परम्परागत स्वरूप को ध्यान में रखते हुए भविष्य की सम्भावनाओं को ध्यान में रखकर व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन किये जाने होंगे। यह परिवर्तन कितनी मात्रा में व किस सीमा में हो रहे हैं? उसका विश्लेषण किया गया है।

कुशलगढ़ पंचायत समिति के व्यवसायिक संरचना के अध्ययन हेतु द्वितीयक स्तर के आंकड़े सेन्सस विभाग भारत सरकार द्वारा प्रकाशित जिला जनगणना पुस्तिका वर्ष 1961, 1971, 1981 व 1991 के साथ सामान्य आर्थिक सारणियां व जनजाति आर्थिक सारणियों को आधार माना गया है। जनसंख्या के व्यावसायिक संरचना में आये परिवर्तन को सामान्य प्रतिशत द्वारा दर्शाया गया है। राजस्थान राज्य व बांसवाड़ा में वर्ष 1961 से 1991 की जनसंख्या के व्यावसायिक संरचना का कुशलढ़ पंचायत समिति से तुलना की गई है। मुख्य काम करने वालों को 9 श्रेणियो में बांटा गया है, इसके अतिरिक्त कुल कार्यशील जनसंख्या, सीमान्तिक काम करने वाले और काम न करने वाले की श्रेणियों में विभक्त किया है। जो निम्न प्रकार है–

1. काश्तकार – एक व्यक्ति को काश्तकार तब माना जा सकता है यदि वह स्वयं एक मालिक के रूप में, एकल कार्यकर्ता या पारिवारिक कार्यकर्ता के रूप में अपनी खुद की जमीन, सरकार से पट्टे (लीज) पर प्राप्त जमीन या किसी दूसरे व्यक्ति या संख्या से नकद या जिन्स पर ली गई जमीन पर स्वयं खेती करता है या अपने निर्देशन अथवा देखरेख में उस जमीन पर खेती करवाता है। सारणी संख्या 3–ए से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1991 में राजस्थान की कुल जनसंख्या में काश्तकार 18.59 प्रतिशत हैं, बांसवाड़ा में 24.56 प्रतिशत जबकि कुशलगढ़ पंचायत समिति में 29.98 प्रतिशत हैं, जो राज्य एवं बांसवाड़ा जिले की तुलना में अधिक हैं। कुल जनसंख्या में कार्यरत जनसंख्या का प्रतिशत राजस्थान में 58.79 प्रतिशत व बांसवाड़ा जिले में 78.58 प्रतिशत है। जबकि कुशलगढ़ पंचायत समिति में 92.47 प्रतिशत जनंसख्या काश्तकारी व्यवसाय से जुड़ी हुई है। कृषि व्यवसाय में राजस्थान में 1961 में जनजाति लोगों का प्रतिशत 16.2 प्रतिशत था बांसवाड़ा में 80.13 प्रतिशत था जबकि 1991 में बढ़कर राजस्थान में 17.76 प्रतिशत बांसवाड़ा में 86.13 प्रतिशत और कुशलगढ़ में 96.27 प्रतिशत जनसंख्या काश्तकारी व्यवसाय में लगी हुई है। 1971 से 1991 के मध्य बांसवाड़ा जिले में काश्तकारी व्यवसाय में जनजाति लोगों की भागीदारी बढी है। जबकि कुशलगढ़ में काश्तकारी व्यवसाय में 3.19 प्रतिशत की कमी आई है। राजस्थान में 1961 से 1991 के मध्य गैर जनजाति के लोगों की काश्तकार व्यवसाय में कमी हुई है। बांसवाड़ा जिले में गैर जनजाति के लोगों की भागीदारी 1961 से 1971 में 2.58 प्रतिशत, 1971 से 1981 के दशक में 2.07 प्रतिशत एंव 1981 से 1991 के दशक में 1.36 प्रतिशत की दर से कमी हुई है। कुशलगढ़ में राज्य व बांसवाड़ा जिले की तुलना में अन्य व्यवसायों में भागीदारी बहुत कम है।

2. खेतीहर मजदूर – जो व्यक्ति नकद या जिन्स के रूप में मजदूरी या बटाई लेकर किसी दूसरे व्यक्ति के खेत में काम करता है वह खेतीहर मजदूर कहलाता है। वह केवल दूसरे के खेत में मजदूरी का काम करता है तथा उस जमीन के पट्टे या ठेके पर उसका किसी प्रकार का हक नहीं होता है। 1991 में राज्य में कुल जनसंख्या का 3.16 प्रतिशत, बांसवाड़ा जिले में 3.04 प्रतिशत एंव कुशलगढ़ में 1.43 प्रतिशत भाग था जबकि कार्यरत जनसंख्या का राज्य में 10 प्रतिशत, बांसवाड़ा जिले में 9.36 प्रतिशत व कुशलगढ़ पंचायत समिति में 4.42 प्रतिशत जनसंख्या खेतीहर मजदूर के रूप में कार्य करती है। 1961

से 1991 तक राज्य में खेतीहर मजदूरों के रूप में जनजाति के लोगों की वृद्धि हुई है जबकि गैर जनजाति के लोगों में कमी आई है। बांसवाड़ा जिले में जनजाति के लोगों की 1961 से 1991 के मध्य राज्य की तुलना में वृद्धि हुई है। पंचायत समिति कुशलगढ़ में 1971 से 1991 के मध्य राज्य व बांसवाड़ा जिले की अपेक्षा कमी आई है। लेकिन प्रतिशत रूप में अधिक जनसंख्या खेतीहर मजदूर के रूप में कार्य कर रही है जो चिन्ता का विषय है। 1981 के दशक में जरूर कुछ कमी आई है।

3. पशुपालन, जंगलात में काम करना, मछली पकड़ना, शिकार, बागान, फल उद्यान व सम्बन्धित कार्यकलाप – 1991 में कुल जनसंख्या और कुल कार्यरत जनसंख्या का प्रतिशत राज्य की अपेक्षा बांसवाड़ा जिले में कम पाया जाता है। इस व्यवसाय में कुशलगढ़ पंचायत समिति में राज्य व बांसवाड़ा जिले की तुलना में नगण्य है। इससे स्पष्ट है कि क्षेत्र के वनों में कमी हुई है। प्राकृतिक सम्पदा का अन्धाधुन्ध दोहन किया गया है।

4. खनन व उत्खनन – विभिन्न प्रकार की खान जैसे कोयला, भूरा कोयला, अशोधित पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, लोह अयस्क, मैंगनीज, सोना, चांदी और तांबा अयस्क, पत्थर निकालना, मिट्टी व रेत के गड्ढे, कीमती और अर्द्धकीमती रत्न अभ्रक इत्यादि में लगे व्यक्ति इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। खनन व उत्खनन के कार्य में बांसवाड़ा जिले में कुल कार्यरत जनसंख्या का 0.15 प्रतिशत भाग है जबकि इस जनजाति बाहूल्य क्षेत्र में 1961 से 1991 तक (जनजाति, गैरजनजाति) किसी भी प्रकार की जनसंख्या इस व्यवसाय में नहीं है।

5 अ. पारिवारिक उद्योग – पारिवारिक उद्योग वह उद्योग है जो परिवार के मुखिया द्वारा स्वयं और मुख्यतः परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा घर पर या ग्रामीण क्षेत्रों में गांव की सीमा के अन्तर्गत और नगरीय क्षेत्र में उस मकान के अन्दर या अहाते में जिसमें परिवार रहता है चलाया जाता है तथा जिसे एक पंजीकृत उद्योग के रूप में नहीं चलाया जा रहा हो। 1991 में पारिवारिक कुटीर उद्योग में कुल जनसंख्या का राजस्थान में 0.10 प्रतिशत रहा है जो बहुत ही कम है। कुल कार्यरत जनसंख्या का इस व्यवसाय में राज्य का 2.00 प्रतिशत, बांसवाड़ा जिले का 1.25 प्रतिशत एवं कुशलगढ़ पंचायत समिति का मात्र 0.32 प्रतिशत रहा है। क्षेत्र में पारिवारिक उद्योगों की दशा अच्छी नहीं है। स्त्रियों की संख्या क्षेत्र में 18 है जो बहुत ही कम है। राजस्थान में जनजनति के लोगों का 1961 में 0.75 पतिशत था वह बढ़कर 1981 में 0.97 प्रतिशत हो गया है लेकिन 1991 में पुनः घटकर 0.81 प्रतिशत रह गया। बांसवाड़ा जिले में जनजाति के लोगों की दशा पारिवारिक कुटीर उद्योग में 1961 से 1991 तक के 30 वर्षों में समान रही है। कुशलगढ़ पंचायत समिति में 1991 में जनजाति का प्रतिशत 0.92 प्रतिशत था।

5 ब. लघु उद्योग : यह श्रेणी पारिवारिक उद्योग के अतिरिक्त किये जाने वाले उत्पादन, संसाधन, सेवाएं तथा मरम्मत आदि से सम्बन्धित है। लघु उद्योगों के अन्तर्गत पंचायत समिति में 0.31 प्रतिशत व्यक्ति कार्यरत हैं और कुल जनसंख्या का यह 0.10 प्रतिशत है। राजस्थान राज्य में कुल जनसंख्या का 1.72 प्रतिशत लघु उद्योगों में लगा हुआ है जो कुल कार्यरत जनसंख्या का 5.54 प्रतिशत है। बांसवाड़ा जिले में कुल जनसंख्या का 0.59 प्रतिशत कार्यरत हैं और कुल कार्यरत जनसंख्या का यह 1.82 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट होता है कि कुशलगढ़ पंचायत समिति राज्य व बांसवाड़ा जले की तुलना में अभी भी लघु उद्योगों की दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है। 1961 में जनजाति के लोगों का प्रतिशत बांसवाड़ा में 1.65 प्रतिशत था, 1971 में बढ़कर 2.73 प्रतिशत, 1981 में 14.49 प्रतिशत तथा 1991 में 17.22 प्रतिशत हो गया जबकि गैर जनजाति के लोगों में कमी आई है। राजस्थान में भी पिछले 20 वर्षों में जनजाति के लोगों में वृद्धि हुई है। कुशलगढ़ क्षेत्र में जनजाति लोगों का 1971 में 57.46 प्रतिशत लघु उद्योगों में कार्यरत था यह घटकर 1991 में मात्र 16.19 प्रतिशत रह गया है। जबकि गैर जनजाति के लोगों का प्रतिशत बढ़ा है। क्षेत्र में आदिवासियों की दयनीय स्थिति को दर्शाता है। महिलाओं की क्षेत्र में वृद्धि की अपेक्षा कमी हुई है।

(6) निर्माण : सभी व्यक्ति जो भवन, सड़कों, रेलवे, टेलीग्राफ तथा टेलीफोन, जलपथ, जल बांधों, हाइड्रो इलेक्ट्रिक परियोजनाएं तथा औद्योगिक संयंत्रों के निर्माण व अनुरक्षण में कार्यरत हों तथा निर्माण से संबंद्ध कार्यकलाप जैसे नलकारी, तापन, वातानूकुलन, प्रतिष्ठापन, टाइल, संगमरमर, ईंट इत्यादि के विन्यास में लगे हों, उन्हें इसी श्रेणी के अन्तर्गत काम करने वाला माना गया है। निर्माण व्यवसाय मेमं राज्य की कार्यरत जनसंख्या का 2.42 प्रतिशत है जो कुल जनसंख्या का 0.77 प्रतिशत है। बांसवाड़ा जिले

में कुल जनसंख्या का 0.36 प्रतिशत है जबकि कार्यरत जनसंख्या का 1.11 प्रतिशत निर्माण व्यवसाय लगा हुआ है। कुशलगढ़ पंचायत समिति में कार्यरत जनसंख्या का प्रतिशत 0.07 प्रतिशत है तथा कुल जनसंख्या का यह 0.02 प्रतिशत है। जो राज्य व बांसवाड़ा जिले की तुलना में कम है। राज्य में गैर जनजाति के लोगों का आधिपत्य रहा है जो सारणी संख्या 3–ए से स्पष्ट होता है। बांसवाड़ा जिले में जहां गैर जनजाति के लोगों में कमी आई है जबकि 1961 से 1991 में जनजाति लोगों की भागीदारी निर्माण कार्यों में बढ़ी है। पिछले 20 वर्षों में कुशलगढ़ पंचायत समिति में जनजाति के लोगों में वृद्धि हुई है। जहां 1971 में 44. 78 प्रतिशत वह बढ़कर 1991 में 56 प्रतिशत हो गया। जबकि गैर जनजाति के लोगों की निर्माण व्यवसाय में कमी हुई है। इससे स्पष्ट हो रहा है कि क्षेत्र में गरीबी बढ़ी है, अधिकांश युवा बेरोजगार हो गए हैं जो भवन निर्माण, सड़क निर्माण व बांध बनाने में लगे हुए हैं। यहां के अधिकांश युवा गुजरात के अहमदाबाद, बड़ौदा, सूरत तथा कोटा की ओर पलायन कर जाते हैं।

(7) व्यापार एवं वाणिज्य – इस क्षेत्र में वह सभी काम करने वाले शामिल हैं जो सभी प्रकार के थोक एवं फुटकर व्यापार तथा अन्य वाणिज्यक सेवाओं जैसे वित्त व्यवस्था, बीमा, स्थावर सम्पदा तथा व्यवसायिक सेवाओं तथा प्रदत्त विधिक सेवाओं में कार्यरत हों। राज्य की कुल कार्यरत जनसंख्या का 6. 41 प्रतिशत है एवं कुल जनसंख्या का 2.03 प्रतिशत है। बांसवाड़ा जिले में कुल कार्यरत जनसंख्या का 3.48 प्रतिशत है एवं कुल जनसंख्या का 1.12 प्रतिशत है। जो राज्य की तुलना में कम है। कुशलगढ़ पंचायत समिति में कार्रत जनसंख्या का 0.63 प्रतिशत है तथा कुल जनसंख्या का 0.20 प्रतिशत है। क्षेत्र में राज्य व बांसवाड़ा जिले की तुलना में व्यापार एवं वाणिज्य का क्षेत्र बहुत ही कम है। जनजाति लोगों का प्रतिशत राज्य में 1961 में 0.49 प्रतिशत था वह बढ़कर 1981 में 1.65 प्रतिशत व 1991 में 1.84 प्रतिशत था जो गैर जनजाति के लोगों की अपेक्षा बहुत ही कम है। बांसवाड़ा जिले में 1961 में जनजाति लोगों का प्रतिशत 3.64 प्रतिशत था जो बढ़कर 1991 में 6.71 प्रतिशत हो गया बांसवाड़ा जिले में राज्य की तुलना में वृद्धि हुई है लेकिन गैर जनजाति का प्रतिशत 1961 में 96.36 था जो घटकर 1991 में 93.29 प्रतिशत हो गया फिर भी जनजाति जनसंख्या की तुलना में यह बहुत अधिक है। पंचायत समिति में 1971 में 44.78 प्रतिशत था जो लगातार घटते हुए 1991 में 14.93 प्रतिशत हो गया। क्षेत्र राज्य व बांसवाड़ा जिले से अधिक जनजाति लोग व्यापार व वाणिज्य के क्षेत्र में लगे हुए हैं। व्यापार एवं वाणिज्य में जनजाति लोगों की भागीदारी बहुत ही कम है।

(8) परिवहन, संग्रहण और संचार– सभी व्यक्ति जो किसी भी प्रकार के परिवहन चाहे वह सड़क द्वारा, रेल द्वारा, जल द्वारा या वायु द्वारा हो या भंडारण, संग्रहण क्रिया कलाप में जिनकी भागीदारी हो तथा संचार माध्यम जैसे डाक, तार, टेलीफोन तथा प्रसारण आदि में लगे हों उन्हें इसी श्रेणी के अन्तर्गत काम करने वाला माना गया है। राजस्थान में कुल कार्यरत जनसंख्या का वर्ष 1991 में 2.39 प्रतिशत है एवं कुल जनसंख्या का प्रतिशत 0.75 प्रतिशत है। बांसवाड़ा जिले में यह प्रतिशत 0.82 प्रतिशत कार्यरत जनसंख्या व कुल जनसंख्या का 0.27 प्रतिशत है जो राज्य की तुलना में कम है लेकिन कुशलगढ़ से अधिक है। क्षेत्र में जहां कार्यरत जनसंख्या का प्रतिशत 0.13 है एवं कुल जनसंख्या का प्रतिशत मात्र 0.04 प्रतिशत जो लगभग न्यून है। जनजाति और गैर जनजाति के सन्दर्भ में क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों में वृद्धि हुई है। यह वृद्धि बांसवाड़ा जिला तथा राजस्थान से अधिक है। राज्य में 1961 से 1991 के 30 वर्षों में गैर जनजाति के लोगों की भागीदारी अधिक है। क्षेत्र में गैर जनजाति की स्त्रियों का प्रतिशत 0.08 प्रतिशत है जबकि जनजाति की एक भी महिला इस व्यवसाय में नहीं है।

सारणी 2.3

कुशलगढ़ पंचायत समिति, बांसवाड़ा जिला व राजस्थान का व्यावसायिक संरचना वर्ष 1991

क्र. सं.	व्यवसाय	राजस्थान		बांसवाड़ा		कुशलगढ़	
		कुल जन.	कुल कार्यरत जनसंख्या	कुल जन.	कुल कार्यरत जनसंख्या	कुल जन.	कुल कार्यरत जनसंख्या

1.	काश्तकार	18.59	58.79	24.56	78.58	29.98	92.47
2.	खेतीहर मजदूर	3.16	10.00	3.04	9.36	1.43	4.42
3.	जंगल में काम करना, मछली शिकार, बागवानी	0.57	1.82	0.39	1.19	0.06	0.20
4.	खनन व उत्खनन	0.33	1.03	0.05	0.15	–	–
5ए.	पारिवारिक कुटीर उद्योग	0.63	2.00	0.41	1.25	0.10	0.32
5बी.	लघु उद्योग	1.72	5.45	0.59	1.82	0.10	0.31
6.	निर्माण	0.77	2.42	0.36	1.11	0.02	0.07
7.	व्यापार एवं वाणिज्य	2.03	6.41	1.12	3.48	0.20	0.63
8.	परिवहन संग्रहण और संचार	0.75	2.39	0.27	0.82	0.04	0.13
9.	अन्य सेवाएं	3.07	9.69 100%	1.71	5.24 100%	0.35	1.10 100%
	कार्यशील जन.	31.63	13910571	32.50	375577	32.42	33045
	सीमान्त जन.	7.25		13.89		17.76	
	अकार्यशील जन.	61012 100%		53.61 100%		49.80 100%	
	कुल जनसंख्या	44005990		1155600		101900	

(9) अन्य सेवायें – इस श्रेणी में वे सभी काम करने वाले आते हैं जो बिजली, गैस और जल, लोक प्रशासन तथा रक्षा सेवायें, चिकित्सा व स्वास्थ्य सेवाएं, धार्मिक व कल्याण सेवाएं, मनोरंजन व सांस्कृतिक सेवायें तथा वैयक्तिक सेवाओं में लगे हैं। अतः स्पष्ट है कि इस श्रेणी में वे सभी कार्यकर्ता आते हैं जो ऊपर दी गई किसी भी औद्योगिक श्रेणी के अन्तर्गत नहीं आते हैं तथा जिनके क्रिया कलापों को अपर्याप्त रूप में परिभाषित किया गया है। कार्यशील जनसंख्या या मुख्य काम करने वाले वे लोग हैं जिन्होंने वर्ष के अधिकांश समय अर्थात् 183 दिन या उससे अधिक काम किया है, मुख्य काम करने वाले की श्रेणी में आते हैं। सामान्य मजदूर जो विविध क्रिया कलापों में काम करने के अभ्यस्त हैं को भी अन्य सेवाओं के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है। राजस्थान में 1991 में कुल कार्यरत जनसंख्या का अन्य सेवाओं में 9.69 प्रतिशत है। राज्य में कुल जनसंख्या का 3.07 प्रतिशत अन्य सेवाओं में हैं। बांसवाड़ा जिले में कार्यरत जनसंख्या का 5.24 प्रतिशत हैं एवं कुल जनसंख्या का 1.74 प्रतिशत है। राज्य की तुलना में जिले में कम लोग हैं जबकि कुशलगढ़ पंचायत समिति में कुल कार्यरत जनसंख्या का 1.10 प्रतिशत है तथा कुल जनसंख्या का प्रतिशत 0.35 प्रतिशत है। अन्य सेवाओं के अन्तर्गत क्षेत्र में बहुत कम लोग लगे हुए हैं। सामान्य जनसंख्या और जनजाति जनसंख्या में पिछले 20 वर्षों में लगभग समानता है। लेकिन जनजाति के अधिकांश लोग क्षेत्र में सामान्य मजदूरी के क्रिया कलपों में लगे हुए हैं। बांसवाड़ा जिले में जनजाति के लोगों का प्रतिशत 1961 में 10.47 प्रतिशत था। वह क्रमशः बढ़ता हुआ1991 में 25.25 प्रतिशत हो गया। राज्य में यह प्रतिशत कम है और जनजाति के लोगों की भागीदारी अधिक है।

कार्यशील जनसंख्या –

1 से 9 तक के सभी व्यवसायों में लगी हुई जनसंख्या के योग को कार्यशील जनसंख्या कहा गया है। राजस्थान राज्य में वर्ष 1991 में कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत 31.63 है। बांसवाड़ा जिले का प्रतिशत 32.50 प्रतिशत है, जबकि कुशलगढ़ पंचायत समिति का प्रतिशत 32.42 प्रतिशत है। क्षेत्र में कार्यशील जनसंख्या बांसवाड़ा जिले के समान है लेकिन राज्य की तुलना में अधिक है। बांसवाड़ा जिले में कार्यशील स्त्रियों का प्रतिशत 14.40 प्रतिशत है जबकि कुशलगढ़ पंचायत समिति में 12.86 प्रतिशत है जो कम है। जिले में पुरुषों का कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत 51.37 प्रतिशत है जो जिले से 0.30 प्रतिशत अधिक है। क्षेत्र में पुरुषों की तुलना में स्त्रियों का कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत बहुत कम है। राज्य में कार्यशील जनसंख्या का जनजातीयों का औसत पिछले तीस वर्षों में 13.16 प्रतिशत है जबकि गैर जनजातियों का औसत 86.84 प्रतिशत है। जबकि बांसवाड़ा में यह औसत क्रमशः जनजाति का 76. 51 प्रतिश्ता एवं गैर जनजाति का 25.5 प्रतिशत है। राज्य की तुलना में जिले में जनजाति कार्यशील जनसंख्या अधिक है गैर जनजाति कम है। कुशलगढ़ पंचायत समिति में यह औसत जनजातियों में 95.15 प्रतिशत है जो राज्य व जिले की तुलना में अधिक है।

सीमान्तिक काम करने वाले –

सीमान्तिक कार्य करने वाले वे व्यक्ति है, जिन्होंने परिगणना के पूर्व के एक वर्ष में किसी भी समय कुछ भी काम किया है, किन्तु उन्होंने वर्ष के अधिकांश समय में काम नहीं किया है। दूसरे शब्दों में वे, जिन्होंने परिगणना से पिछले वर्ष में कभी काम किया है किन्तु वह अवधि जिसमें उन्होंने काम किया है 183 दिन से कम है, उन्हें सीमान्तिक काम करने वाला माना गया है। सीमान्तिक कार्य करने वालों में 1991 में राज्य में 7.27 प्रतिशत है। जिले में यह प्रतिशत 13.89 प्रतिशत जबकि पंचायत समिति कुशलगढ़ में यह 17.76 प्रतिशत है जो जिले एवं राज्य की तुलना में अधिक है। क्षेत्र में बेरोजगारी विद्यमान है। जिले में पुरुषों का यह प्रतिशत 1.33 प्रतिशत है एंव स्त्रियों का प्रतिशत 29.02 प्रतिशत है। जिले में सीमान्तिक जनसंख्या का प्रतिशत पुरुषों की तुलना में स्त्रियों का क्षेत्र में 34.49 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में स्त्रियां बेरोजगार हैं उनके विछड़ेपन की तस्वीर झलकती है। जाति के सन्दर्भ में 1981 में जनजाति का प्रतिशत राज्य में 23.50 प्रतिशत था जो घटकर 1991 में 19.85 प्रतिशत हो गया। जबकि गैर जनजाति का प्रतिशत बढ़ा है। जिले में 1981 में 85.22 प्रतिशत था जो घटकर 1991 में 82.70 प्रतिश्ता हो गया लेकिन राज्य की तुलना में जिले में जनजाति का प्रतिशत अधिक है। कुशलगढ़ पंचायत समिति में 1981 में 99.54 प्रतिशत सीमान्तिक जनजाति थी जो घटकर 1991 में 96.75 प्रतिशत हो गई। सीमान्तिक कार्यशील जनसंख्या में गैरजनजाति का प्रतिशत बहुत ही नगण्य है। क्षेत्र के आदिवासियों की आर्थिक दशा बहुत खराब है।

अकार्यशील जनसंख्या –

काम न करने वालों ने परिगणना से पूर्व के पूरे वर्ष में आर्थिक रूप से किसी भी उत्पादक गतिविधि में भाग नहीं लिया है। काम न करने वाला निम्नलिखित सात वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. घरेलू कार्य, 2. विद्यार्थी, 3. आश्रित, 4. अवकाश प्राप्त व्यक्ति या किराया भोगी, 5. भिखारी, 6. संस्थाओं के निवासी, 7. अन्य काम न करने वाले।

1991 में राज्य में अकार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत 61.12 प्रतिशत है। जिले में यह प्रतिशत 53. 61 प्रतिशत है जो राज्य की तुलना में कम है। क्षेत्र में 49.0 प्रतिशत अकार्यशील जनसंख्या है जो राज्य एवं जिले की तुलना में कम है। 1991 में जिले में पुरुष 47.60 प्रतिशत व स्त्रियां 56.58 प्रतिशत अकार्यशील जनसंख्या के अन्तर्गत हैं। कुशलगढ़ में पुरुषों का प्रतिशत 47.03 है जबकि स्त्रियों का प्रतिशत 52.68 प्रतिशत है जो जिले की तुलना में कम है। क्षेत्र में जनजाति जनसंख्या का प्रतिशत 94.63 है जो राज्य व जिले की तुलना में अधिक है। कुल जनसंख्या में जनजाति का औसत राज्य में 11.93 प्रतिशत जिले में 72.41 प्रतिशत व कुशलगढ़ में 95.12 प्रतिशत है। राज्य व जिले की तुलना में बहुत अधिक है।

निष्कर्ष –

1. कुशलगढ़ पंचायत समिति खनन, पारिवारिक कुटीर उद्योग एवं लघु उद्योगों में लगे हुए लोगों की जनसंख्या राजस्थान एवं बांसवाड़ा जिले की तुलना में बहुत कम है। पारिवारिक कुटीर उद्योग में कुल जनसंख्या का राजस्थान में 0.63 प्रतिशत एवं बांसवाड़ा जिले में 0.41 प्रतिशत तथा कुशलगढ़ पंचायत समिति में 0.10 प्रतिशत रहा है जो बहुत ही कम है।

2. खनन व्यवसाय में लगे हुए लोगों की संख्या भी राजस्थान राज्य में बहुत कम है, जबकि अरावली के दक्षिण में पर्याप्त मात्रा में खनिज उपलब्ध हैं जिससे स्पष्ट होता है कि यहां के लोगों को खनन के क्षेत्र में कोई विशेष रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं हुए हैं। खनन व उत्खनन के कार्य में बांसवाड़ा जिले में कुल कार्यरत जनसंख्या का 0.15 प्रतिशत भाग है जबकि इस जनजाति बाहुल्य कुशलगढ़ पंचायत समिति में 1961 से 1991 तक जनजाति, गैर जनजाति, किसी भी प्रकार की जनसंख्या इस व्यवसाय में नहीं है।

3. पारिवारिक कुटीर उद्योग में कुशलगढ़ पंचायत समिति में वर्ष 1961 से 1991 के मध्य जनसंख्या में कमी होना चिन्ता का विषय है।

4. लघु उद्योगों में लगी हुई जनसंख्या में वर्ष 1961 से 1991 के मध्य कुछ कमी हुई है जहां 1961 में 0.75 प्रतिशत था जो 1981 में 0.97 प्रतिशत हो गया लेकिन 1991 में घटकर 0.81 प्रतिशत रह गया।

5. कुशलगढ़ पंचायत समिति में लघु उद्योगों में 1991 में जनजाति का प्रतिशत 0.92 प्रतिशत था। इन उद्योगों में जनजाति लोगों की कम भागीदारी आदिवासियों की दयनीय स्थिति को दर्शाता है।

6. निर्माण कार्यों के अन्तर्गत कुशलगढ़ क्षेत्र में जनजाति लोगों की भागीदारी बढ़ी है जबकि गैरजनजाति लोगों में इस व्यवसाय में कमी हुई इससे स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में गरीबी बढ़ी है।

7. व्यापार एवं वाणिज्य में लगे व्यक्तियों का प्रतिशत नगण्य है।

8. परिवहन, संग्रहण और संचार के अन्तर्गत गैर जनजाति के लोगों की भागीदारी अधिक है। जनजाति वर्ग की एक भी महिला इस व्यवसाय में नहीं है।

9. कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत कुशलगढ़ पंचायत समिति में अधिक है। सीमान्तिक कार्यशील जनसंख्या में गैर जनजाति का प्रतिशत बहुत ही नगण्य है। जो आदिवासियों की खराब आर्थिक दशा को दर्शाता है।

सन्दर्भ सूची –

I.	**पुस्तकें**		
1	श्यामलाल	1987	'जनजातियों में शिक्षा' प्रिन्टवेल पब्लीशर, जयपुर
2.	त्रिवेदी, हरिवल्लभ	1992	'राजस्थान जनजातीय संस्कृति तथा विकेन्द्रीत आर्थिक विकास का विकल्प' संघी प्रकाशन, जयपुर
3.	शाह और जोशी वी.	1985	'गुजरात में जनजाति शिक्षा' अजन्ता पब्लिकेशन, नई दिल्ली
4.	विद्याथ्री, एल.पी.	1986	'जनजातियों का विकास और प्रशासन'
5.	लोढ़ा आर.एम.	2000	'औद्योगिक भूगोल' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
II	**शोध प्रबन्ध**		

6.	भील, हरिशंकर	2001	पीएच.डी. शोध ग्रन्थ 'बांसवाड़ा जिले का मार्बल उद्योग' भूगोल विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर
7.	परमार, लक्ष्मण लाल	1998	पीएच.डी. शोध ग्रन्थ 'खनन एवं पर्यावरण बांसवाड़ा' भूगोल विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
8.	नागर, हरित	2000	पीएच.डी. शोधग्रन्थ 'जनसंख्या घनत्व वितरण तथा वृद्धि प्रतिरूप बांसवाड़ा' भूगोल विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

III. अन्य सामग्री –

9. जिला सांख्यिकी रूपरेखा, बांसवाड़ा, 2002
10. District Consus Handbook-Banswara, 1961
11. General Economic Tables – Rajasthan 1961, 1971, 1981, 1991
12. Rajasthan Special Tables for Scheduled Tribes, 1961, 1971, 1981, 1991.

KHUSHWANT SINGH'S PERSPECTIVES ON PARTITION (A Study of "Train to Pakistan")

Dinesh Chandra Rawat
Assistant Professor in English
Shri Govind Guru Govt College Banswara

Abstract

This paper deals with the partition of the sub-continent of India in 1947, The partition affected millions of people on both the sides of the regions which still live under its shadows. The present study intended to investigate the portrayal of the partition by Khushwant singh in his novel " Train to Pakistan" with the objective to focus upon his own perspective on the partition, in "*Train to Pakistan"*. The study is based on the analysis of the texts, from the novel. The study has shown that Khushwant singh has a general perspective without any Geographical and regional bias.

Key words: Partition studies; colonialist; post colonial; ideology; identity.

Introduction

August 1947 marks the end of the British Raj in the Subcontinent. The departure of the British from the subcontinent led to the creation of two independent states, India and Pakistan. The division was based on two nation theory with the argument that the Hindus and the Muslims cannot live together as one nation since both have distinct social, cultural and religious identities (Hassan: 1993). This resulted in massive and violent migration of the people across. Muslims moved into Pakistan, and Sikhs and Hindus moved into India with the prospects of peaceful and better living, with their own religious as well as ethnic identities.

Unfortunately, the split between Pakistan and India served to heighten each other's hostilities instead of bringing peace in the region. Civil tension continued mounting for months: thousands of families were split apart, homes burnt down and villages abandoned. Some women were so embarrassed of the sexual humiliation that they refused to return home and opted for suicide. The destruction of families through murder, suicide, and kidnapping caused grievous partition trauma.

The Partition of India does not mean only the vivisection of a vast subcontinent but also catastrophe for millions of people, the effects of which have not died out yet as is suggested by recent events. The massive involuntary and unprecedented migration caused communal clashes, massacres and atrocities of all kinds. Both the sides of the boundaries were filled with innumerable refugees- who were rendered orphans by the storm called Partition. In fact, this event, which resulted in the barbarity of the most heinous kind and in the massacre of not fewer than two million people, was terribly tragic and heart-rending because it was deliberate, and not a natural calamity like an earthquake or a flood.

In the riots, which preceded the partition in the Punjab Province, it is believed that between 200,000 and 2,000,000 people were killed in the retributive genocide between the religions UNHCR estimates million Hindus, Sikhs and Muslims were displaced during the partition; it was the largest mass migration in human history.

The Partition literature:

The tragedy of the partition encounter has given rise to fictional explorations with an attempt to define the inner turmoil and social complexes that plagued the subcontinent. The

vast volume of partition fiction in English, Urdu, Hindi, Bengali and other languages of the Subcontinent faithfully records the gruesome human disaster in the wake of partition. The incredible suffering and bewilderment of the people of the subcontinent has been a favourite theme with the Indian and Pakistani writers.

Khushwant Singh's *Train to Pakistan* (1956), Atia Hussain's *Sunlight on a Broken Column* (1961), Rahi Masoom Raza's *Adha Gaon* (1966), Bhashma Sahni's *Tamas* (1973), Amitav Ghosh's *Shadow Lines* (1988), short stories by Saadat Hassan Manto and the poems of Faiz Ahmed Faiz are some such examples that attempt to give us an insight into the public frenzy, communal hatred, extreme disintegration and large scale sectarian violence.

The Focus of This Paper

The objective of this paper is to highlight the Khushwant Singh's individual perspective on the partition of India in 1947'

Khushwant Singh in his novel, *Train to Pakistan*, like Sidhwa, also shows that all the diverse communities in India live in peace & harmony, before politics of partition Shatters it at Mano Majra, which stands for India, the day begins with the Muslim prayer leader facing west toward mecca & calling Allah-o-Akbar to the believers this is followed by the Sikh priest's prayers . Similarly, the day at mano majra ends with the Imam ailing the faithful to prayers with, 'God is great'. Then the Sikh priest leads the evening prayers at Sikh temple, Khushwant Singh portrays the peaceful co-existence & the fine harmony, at religious, cultural & social levels among the two major communities of India before partition. The fact that the Sikh priest waits for his turn & allows the Muslim priest to finish his call to prayers, indicates, the kind of harmonious atmosphere that prevails in India among various religious communities Singh stresses upon the compatibility of diverse religious communities by showing that the mosque & the Sikh temple stand on the same village common in the center of the village. He also shows train going to & from Lahore to other parts of India including Delhi, hereby stressing & establishing the geographical unity of India.

Khushwant Singh in Train to *Pakistan* presents his opposition to the partition & establishes the indivisibility of the cultural & political heritage between the Sikhs & the Muslims after centuries of intermingling. Singh suggests that the two communities were the product of the same inseparably intertwined social, cultural & political past. Singh presents the Indian perspective at the border & political level through a metaphor of purely personal relationships. Nooran, a Muslim girl & the beloved of Sikh protagonist, Juggat Singh, Jugga, carries his child (1988, P.115): Singh uses this child inside the body of a Muslim girl fathered by a Sikh as a metaphor for the intermingling of the Hindu-Muslim strands & the Hindu Sikh contribution to it. The child inside the body of a Muslim girl fathered by a Sikh is a metaphor for the joint social, cultural & Political past of the Hindus & the Muslims, their peaceful co-existence, suggesting the indivisibility of the combined & hybrid identity of the Hindus/Sikhs & the Muslims, but threatened to death by partition.

It will be interesting to see the portrayal of the conduct of Sikh Juggat Singh towards his Muslim beloved by Singh in *Train to Pakistan*. The Sikh protagonist of the novel sacrifices his life for the sake of Muslim refugees & his beloved. The dacoits at mano majra plan to attack a Muslim refugee train in revenge for many train massacres in Pakistan. Singh creates a new identity of the Sikhs through such presentation.

Singh on the surface blames both the Muslims & the Sikhs equality for killing & murders (3). However, he suggests that the riots are started in the Muslim majority areas & the Sikhs kill only in retaliation, The Sikh writers admit to Sikh atrocities against the Muslims, but argue that it is only in retaliation for what the Muslims did to them (Saros cowasjee, 82), but

this contention is not supported by independent observers. Collins & Lapierre refer to Sikhs as the most vicious killers of all at the time of the Indian partition. (1975, P. 361).

Singh in *Train to Pakistan* dwells upon the suffering & the misery of the Hindus & the Sikhs, and Muslims, he provides the detailed accounts of the atrocities & crimes committed by the Sikhs, Hindus and Muslims. Singh comes up with another such account of violence against the Sikhs by the Muslims and Muslims by Sikhs, He shows that the train carrying the Sikhs is held up at a station for four days. The Sikh children cry for water, but there is no water for them. Singh shows that the father of the children gives them their own urine to drink & then in desperation killed them along with his wife & then shoots himself dead.

The study, based upon the exhaustive analysis of the texts of Khushwant singh in the light of post colonial critical theories. He associate the partition with evil and destruction and stressed upon the peaceful harmony that existed between Muslims, Hindus and Sikhs before partition. However, He also shows that there were difficulties & challenges involved in the Hindu-Muslim synthesis, Singh conforming to the official Indian perspective on partition, has presented partition in "*Train to Pakistan"* as artificial unnatural, illogical and undesirable.

Khushwant Singh due to his intellectual honesty, integrity, impartiality & objectivity in portraying different aspects of partition in „*Train to Pakistan'* The study has also shown that Singh did not portrays the Sikhs & Hindus as nobles & dignified human beings & the Muslims as low born monsters. Above all, he of them reflected their psychology related with partition.

A dark and tragic romance pervades in his novel, which eventually brings out the futility of bloodshed. Singh's great artistic possession is his wit, which he uses so often to condemn the Partition. It was a common practice during the partition to strip a man naked to check whether he was a Hindu or a Muslim. In Singh's 'Train to Pakistan', one of the characters who was circumcised sarcastically remarks, *Where on earth except in India would a man's life depend on whether or not his foreskin had been removed? I would be laughable if it were not tragic,* Thus a state of madness is depicted in which useless and trivial affiliations and practices determined whether a person was fit to live or not. Man can be insane and lunatic if he drinks the poison of communalism and hatred. In the present chapter, an effort is made to understand crisis of values in the novel Train to Pakistan and the novelist's technique as well as his achievement in the art of fiction writing. The novel is a combination of various strains. Humor, violence, cruel events and torture all lend it a tinge of the picaresque novel. The anti-heroic elements play a dual role of the creation as well as destruction. The novelist tries to recapture a certain period in history but he does not succeed in giving it the features of a historical novel. Though thrills excitements and suspense make it a novel of adventure, the horror gives it the appearance of a terror novel. Predominance is the element of parochialism for which Khushwant Singh chooses a certain locale and the characters inherit qualities particular to that area.

The basic purpose of this study is to present, analyze and assess Train to Pakistan as Khushwant Singh's literary achievement. Khushwant Singh is one of India's distinguished men of letters with an international reputation. A brief account of his achievement as a novelist, short-story writer, historian, essayist, sketchiest, journalist and editor are sufficient to establish him Indian Writing in English as a versatile genius. He has produced two novels, a considerable number of short stories, an authentic history of the Sikhs, biographies of Sikh leaders and many articles, which reveal his thought and feeling of a great writer. His presentation of the real and the comic makes him stand as a pillar and peer among modern Indian writers on subjects of concern to contemporary man.

As a fiction artist he is famous for Train to Pakistan (1956) and I shall Not Hear the Nightingale (1959). These novels made a literary reputation with the honor of Padma Bhushan. Three major factors shaped Khushwant Sings personality as a man and an artist. He spent his childhood in the village of his birth in Punjab. He admits: "My roots are in the dunghill of a tiny Indian village." Then he went to school in Delhi and Lahore where he graduated: "I grew up in the Indo-Anglian atmosphere, of New Delhi," Later he went abroad, first to England and then to Japan, the United States, Canada, and few African countries on different assignments. Khushwant Singh is what his British education made him a cultured humanist. He gladly confesses: "I am the product of both East and the West." The Punjab Countryside, Urban Delhi, and the liberal, the sophisticated city of London are the three dominant factors that influenced Khushwant Singh.

Khushwant Singh is essentially an orientalist in outlook who has Indian self and individuality of personality. His journey is a ceaseless quest for identity, which is reflected through the medium of his literary career and art. His creative urge as a novelist lies in continuous search for self-seeking. Though his mind and personality as a whole have been molded by western education and culture, he is at heart a Sikh a pure Indian. He values Indian art and culture and is deeply rooted in the soil. His writing has grown out of the grass roots of the social milieu as his experience of rural India is the base of his creative Endeavour. He has portrayed India as both an outsider and insider. Anthony Burgress comments on his art of fiction as: "The most notable writer from the Punjab is undoubtedly the Sikh Khushwant Singh; whose I Shall Not Hear the Nightingale is a fine chromile of life in a Sikh community in the period 1942-43. We have here a formidable novelist who writes too little.

Khushwant Singh described himself as a writer of history and fiction: "I write about the people I detest most, he asserted. On the fundamental quality of Khushwant Singh, V.A. Shahane writes:

THE IRREPARABLE HUMAN LOSS IN TRAIN TO PAKISTAN:

The creation of the new nation called Pakistan and the sudden departure of the English from India transferring the administration to Indians themselves left lakhs of Indians who lived on the frontiers with unfathomable woes. It was a departing kick of the British Imperialism for both Hindus and Muslims. The clash of communal venom in the late 1947 was something unimaginable in the land of Buddha and Mahatma. The five rivers of prosperity, civilization and life flooded with corpses and blood that rose out of the loss of human values. Instead of jubilation, there were fear and horror. People became aliens in their own homes. Freedom and the creation of a new nation in the Indian sub-continent came in the form of devouring demon. The innocents became flies to the wanton boys. There was a great exodus both from India and Pakistan. People on the border discarded their houses, properties and relatives in order to save their lives. Communal frenzy reached its peak. The hard fought freedom through nonviolence had its celebration in the form of violence. Friends became foes over night and began to crouch on each other. Killing, raping, looting and burning became the order of the day. The whole of North India experienced a tumultuous period. Men had their sport in counting on their prey. There was a mass migration like that of the Israelites in the Old Testament. In order to save the precious lives, evacuation works were carried on both the sides. From the day of the announcement of partition, on an average of 50,000 non-Muslims were brought to safety everyday with the available means of transport. After Partition, published by the Ministry of Information and Broadcasting, Government of India, gives the following detail about the mass migration: "From September 18 to October 29, 1947, in 42 days, as many as 24 non-Muslim foot convoys, totaling 8, 49,000 souls with hundreds of bullock carts and thousands of cattle crossed over to India". Between August 27 and November 6, 1947 about 673 refugee trains ran

between the two nations carrying over 27,99,368 refugees on both the sides. By the end of 1947 about 12, 50,000 refugees were given shelter in 160 camps all over India. In short, the late 1947 was marked with horrified flight on the entire frontier region. Despite these evacuative measures and military escorts, the two nations witnessed lawlessness and violence to the core. Khushwant Singh in his Train to Pakistan describes the situation in this manner: "…all of northern India was in arms, in terror or in hiding". The entire nation was bewildered and shocked to see a nation of Ahinsa with guns and spears thirsting for blood, property and women. Harish Raizada in his article "Train to Pakistan: A Study in Crisis of Values" points out, "The harrowing incidents of 1947 had shaken the faith of all the sensitive and thinking people of India in the intrinsic nobility of man, taught by its sages and saints including Mahatma Gandhi during various stages in its cultural evolution of thousands of years".

The partition and its aftermath was the darkest period in the history of modern India. Many literary and nonliterary works have been produced on the partition of the Indian sub-continent. Of the many literary works, Khushwant Singh's Train to Pakistan is the first novel in English written by an Indian about partition. It was first published in 1956 as Mano Majra when Khushwant Singh was forty. The novel abounds with the description of the partition Holocaust. Khushwant Singh himself felt a great mental agony at the ghastly Human tragedy of partition. Harish Raizada in his article "Train to Pakistan: A Study in Crisis of Values" quotes what Khushwant Singh said in one of his interviews:

• BRUTAL RELIGIOUS PERSECUTIONS:

Partition witnessed unbelievable amount of religious mayhem. Thousands of people were forced to get converted into other religions. Temples, Mosques and gurdwaras were sullied. Those who had firm faith in their religions resisted religious conversion. Eventually, they committed suicide to avoid forced conversions. Holy books burnt. Many shrines turned into stalls and markets. Even animals branded in the name of religion. People changed their dress code and names according to the locale they lived or travelled. Religion is a highly sensitive issue, which will easily evoke any Indian. Unlike the westerners, the Indians are tinged with their religion. They feel religion as their skin, which cannot be peeled off until death. In India, if anyone wishes to converse or write on religion they should do it with utmost care and a note of caution. Any religious delusion will put the entire nation in flames, like the Babar-Masjid issue or the Godhra violence. This research is done on two novels by two different authors. However, none of them is subjective in their approach; none of them feels that their religion is better than others, and none of them identifies with the religion of their own.

The novelists, Khushwant Singh had his first hand experience of the partition holocaust He never portray that his religious people were the best and the others were the worst. He spot a sheep as well as a wolf in every religion. He did not carry away with their religious nepotism or fanaticism; instead stand firm on religious tolerance and unanimity. He has his protagonists drawn from all the three warring religions – Hinduism, Islam and Sikhism.

The reader is forced but to pray that such mishap never occur again. The partition mishap proves that people turn to fanaticism in no time throwing away all their sanity. There will be no difference between human and savage if people kill each other. People should have faith in justice and rule of law. "The arc of moral universe is long but it bends towards justice." The world has to be made a better place to live in.

OBJECTIVES OF THE STUDY:

• The objective of this Dissertation is to understand Khushwant Singh"s perspective on partition in "Train to Pakistan". The novel has received worldwide recognition and admiration

for documenting faithful representation of hatred, mistrust and enormous upheavals culminating in the result of partition.

- The main objective of this study is to highlight the real episode of partition.
- To overcome the faith that only one community was responsible for the blood shed.

References.

- Crane, R.J. (1992). Inventing India: A history of India in English language fiction. London: Macmillan.
- Singh, K. (1988) Train to Pakistan. New Delhi: Ravi Dayal
- 18 Swain, S. P.. "Khushwant Singh‟s Train to Pakistan: A Thematic Analy sis."Indian Writings in English: Vol. VI. Ed. Manmohan Bhatnagar. NewDelhi: Atlantic Publishers and Distributors, 1999. Print.Girdhari. V. T.. "Historical Text, Human Context: Khushwant Singh‟s Train to Pakistan." Fifty Years of Indian Writing: Golden Jubilee Volume. NewDelhi: Indian Association for English Studies, 1999. Print.
- After Partition. The Publications Division, Ministry of Information and broadcasting.
- Agnihotri, R. K.. "On a Pre-Partition: The Question of Hindi-Urdu." Pangs of Partition: Vol. II: The Human Dimension. Ed. S. Settar and Indira
- Alexander, Suja. "Personal Concerns Go Public in Khushwant Singh‟s Train to Pakistan." The Fictional World of
- Khushwant Singh. Ed. Indira Bhatt. New Delhi: Creative Books, 2002. Print
- Bandyopadhyay, Sekhar. From Plassey to Partition: a History of Modern India.New Delhi: Orient Longman, 2004.
- Print. Baptista. New Delhi: Manohar Publishers & Distributors, 2002. Print.
- Belliappa, K. C. "The Elusive Classic: Khushwant Singh‟s Train to Pakistan and Chaman Nahal‟s Azadi." The Literary Criterion 15.2, 1980. Print.
- Bhatia, S. C...Rev. of Azadi. The Literary Criterion. N.p.: n.p., 1976. Print.Bose, Sudhir. "From Print to Film: Train to Pakistan." Manushi (May – June 1998). Print
- Broadcasting, Government of India, New Delhi: 1948. Print.
- Butalia Urvashi. (1998).The other side of silence: voices from the partition of India. New Delhi, India: Penguin Books India (P) Ltd.
- Chakravarti, Ranabir, ed. Trade in India. New Delhi: Oxford University Press,2001. Print.
- Chakravorty, D. K.. "The Theme of the Partition of India in Indian Novels in English." The Indian Novel in English:
- Essays in Criticism. Ed. RaviNandan and R. K. Sinha Sinha. Ranchi: Ankit Publishers, 1987. Print.
- Creative Books, 2002. Print.Khatri, Chote Lal. "Trauma of Partition in Khushwant Singh‟s Train to Pakistan." Indian
- English Fiction: Reading and Reflections. Ed.Gajendra Kumar and Uday Shankar Ojha. New Delhi: Sarup & sons 2003. Print.

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

भारत में ग्रामीण साख प्रदान करने वाली संस्थाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. प्रहलाद सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर
अर्थशास्त्र,
राजकीय महाविद्यालय विच्छीवाड़ा, डूंगरपुर, (राज.)

1. शोध सारांश :–

गाँवों में वित्त उपलब्ध कराने वाली संस्थाएं ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। भारत में आज भी लगभग 68.8 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है। इस आबादी का अधिकांशः भाग कृषि पर *निर्भर है। किसानों को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर रहता पड़ता है।*

प्रस्तुत शोध पत्र में ग्रामीण साख का परिचय देते हुए, इसकी विशेषताओं के साथ, ग्रामीण साख प्रदान करने वाले औपचारिक व अनौपचारिक स्त्रोतों का विवरणात्मक अध्ययन किया गया है।

ग्रामीण साख प्रदान करने वाली संस्थाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हुए ग्रामीण ऋण का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

2. प्रस्तावना :–

2.1 ग्रामीण साख :–

भारत गाँवों का देश है। भारत भर के गाँवों में रहने वाले लोगों की आय का प्रथम स्त्रोत कृषि है। हर साल, किसानों और किसानों को अच्छी फसल सुनिश्चित करने के लिए बहुत अधिक मात्रा में धन की आवश्यकता रहती है। इस तरह वे अक्सर फसल के मौसम आने से पहले अपनी मूल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साहुकारों, जमीदारों व वित्तीय संस्थानों से पैसे ऋण के रूप में लेते हैं और वे अपनी फसल को बेचकर वो उधार चुकाते हैं।

इस तरह, भारत में ग्रामीण इलाकों में कृषि उद्देश्यों या छोटे घरेलू व्यवसायों के लिए लिया गया कोई भी ऋण ग्रामीण ऋण के रूप में जाना जाता है।

2.2 ग्रामीण साख की विशेषताएँ :–

1. *किसानों की उत्पादक साख और अनुत्पादक साख में अन्तर करना काफी मुश्किल होता है।*
2. *कृषि व्यवसाय में मांग और पूर्ति में साम्य संभव नहीं है, जिसके कारण मूल्यों में भारी उतार–चढ़ाव होते रहते हैं।*
3. *कृषि एक मौसमी व्यवसाय है, इसलिए ऋण की मांग भी मौसमी होती है, जिससे ब्याज की दर बढ़ जाती है।*
4. *किसानों के पास उपयुक्त (उचित) जमानत का अभाव होता है।*
5. *ऋण की आवश्यकताओं का पूर्वानुमान नहीं लगा सकते हैं।*
6. *कृषि में प्राकृतिक प्रकोपों के कारण अधिक जोखिम है, जैसे बाढ़, सूखा, पाला, बीमारियों तथा कीठ का प्रभाव।*
7. *कृषि में पूंजी लगाने तथा ऋण प्राप्ति में काफी लम्बा समय लगता है।*

सामान्यतः कृषकों को ऋण सम्बन्धी जरूरतें तीन प्रकार की होती हैं:–

1. ***अल्पकालीन ऋण (Short Term Loan)*** *:– ये ऋण प्रायः अल्प अवधि तक के होते है। ये ऋण प्रमुखतः बीज, खाद आदि को खरीदने तथा पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लिये जाते हैं।*

2. ***मध्यकालीन ऋण (Medium Term Loan)*** *:– ये ऋण प्रायः 15 माह से अधिक परन्तु 5 वर्ष से कम की अवधि तक के लिए लिये जाते हैं। इस प्रकार के साख की जरूरत प्रायः पद कृषि उपकरणों को खरीदने, कुआँ खुदवाने व भूमि लेने के लिए पड़ती है।*

3. ***दीर्घकालीन ऋण (Long Term Loan)*** *:– इस प्रकार का ऋण साखों की उर्वों प्रायः 6 वर्ष से 20 वर्ष तक की होती है। ये ऋण सामान्यतः पूराने कर्जों को चुकाने, भूमि खरीदने, ट्रेक्टर खरीदने, भूमि पर स्थायी सुधार करने आदि के लिए लिये जाते हैं।*

2.3 ग्रामीण साख के प्रमुख स्त्रोत :–

भारत में ग्रामीण देने वाले प्रमुख दो साधन है –

1. ***निजी स्त्रोत*** *:– महाजन, साहूकार, जमींदार आदि।*
2. ***संस्थागत स्त्रोत*** *:– सहकारी समितियाँ, सरकार तथा बैंक व अन्य संस्थाएं आदि।*

(1) ग्रामीण साहूकार और महाजन (Money Lenders) *:– गांव में कृषि ऋण व्यवस्था में कुछ समय पहले इनका वर्चस्व था। ये लोग किसानों से मेन ब्याज वसूलते थे। ये कृषि के अलावा अनुत्पादक के लिए भी ऋण उपलब्ध कराते थे। इनके द्वारा लगाई गई ब्याज दर भी चक्रवृद्धि दर से होती थी तथा भावी ब्याज की राशि ऋण देने से पूर्व ही काट ली जाती थी। कोरे कागज पर अंगूठे के निशान करवाकर मूलधन से अधिक रकम वसुलते थे। किसानों को इनसे आसानी से ऋण मिल जाता था, क्योंकि इसमें किसी तरह का कोई कागज जमा नहीं करवाना पड़ता था तथा नहीं कोई जमानत की आवश्यकता होती है। इसमें साहूकार किसानों को सस्ती कीमत में फसल बैचने के लिए बाध्य भी कर लेते थे।*

सरकार द्वारा इस तरह के ऋणों को रोकने का काफी प्रयास किया गया है किन्तु फिर भी इस हेतु आशानुरूप सफलता नहीं मिल पाई है।

(2) देशी बैंकर (Indigenous Bankers) *:– डॉ. एल.सी. जैन के अनुसार ''देशी बैंकर वह व्यक्ति या संस्था है जो ग्राहकों को ऋण देने के अलावा जमाएं स्वीकार करने तथा हुण्डियों के लेन–देन का कार्य भी करता है।'' इस तरह देशी बैंकरों के मकार्यों को दो भागों में बांट सकते हैं।*

बैंकिंग कार्य व गैर बैंकिंग कार्य। बैंकिंग कार्यों में जमाएं स्वीकार करना, ऋण देना तथा हुण्डियों का व्यवसाय शामिल होता है। ये प्रायः जमाओं पर आधुनिक बैंकों से अधिक ब्याज देते है तथा ऋणों की ऊंची ब्याज दर लेते हैं।

इसके अलावा ये लोग कभी–कभी गैर बैंकिंग कार्य भी करते है – व्यापार, उपभोग, सट्टा आदि। देशी बैंकर कभी–कभी व्यापारिक बैंकों के प्रतिनिधि के रूप में भी कार्य करते है। देशी बैंकर भी महाजनों की भांति विविध कार्यों (जैसे – कृषि, उद्योग, व्यापार, उपभोग आदि) के लिए ऋण सुविधाएं प्रदान करते हैं।

(3) सरकार (Government) *:– ग्रामीण साख की जरूरतों को देखते हुए सरकार ने अल्पकाल के लिए तथा दीर्घकाल के लिए ऋण की व्यवस्था की है। ये ऋण तकावी ऋण कहलाते है। सरकार भू–सुधार ऋण अधिनियम, 1883 के अन्तर्गत दीर्घकालीन ऋण ताि कृषक अधिनियम, 1884 के अन्तर्गत अल्पकालीन ऋण प्रदान करती है। दीर्घकालीन ऋण भूमि पर स्थायी सुधार के उद्देश्य से दिए जाते है जबकि अस्थीय ऋण कृषि संबंधी सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति या अकाल, बाढ़ या अन्य किसी कारण से फसल नष्ट होने पर दिए जाते है। सरकार इन ऋणों पर बहुत कम ब्याज लेती है। परन्तु फिर भी ये ऋण अधिक प्रभावशाली ताि लोकप्रिय नहीं है, क्योंकि ये ऋण कृषकों की केवल 2.3 प्रतिशत जरूरतों की ही पूर्ति करते है और केवल उत्पादक कार्यों के लिए ही मिलते*

है। इसके अलावा ये समय पर नहीं मिल पाते है तथा इन ऋणों की वास्तविक लागत बहुत अधिक होती है। इन ऋणों की वसूली प्रायः सख्ती से की जाती है।

(4) सहकारी समिति (Co-Operative Societies) *:– भारत में सहकारी आंदोलन की नींव सर फ्रेडरिक निकलसन ने रखी। उन्होंने सन् 1895 में अपनी रिपोर्ट Land and Agricultural Bank in Madras 1904 में भारतीय सहकारी साख समिति अधिनियम पारित हुआ और इससे ही देश में सहकारी आंदोलन का श्री गणेश हुआ। देश में आरम्भ से ही सहकारी समितियों का मुख्य उद्देश्य किसी को साख देना रहा है। भारत में साख समितियों का स्तर निम्न प्रकार है :–*

- *गांव स्तर पर प्राथमिक साख समितियाँ*
- *जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी समितियाँ*
- *राज्य स्तर पर राज्य सहकारी समितियाँ*
- *शीर्ष पर रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया स्थित है।*

रिजर्व बैंक राज्य सहकारी बैंक के माध्यम से किसानों को साख सुविधाएं प्रदान करता है।

इन समितियों का उद्देश्य कृषि विकास के लिए कम ब्याज की दर पर पर्याप्त साख सुविधाएं प्रदान करना है। समितियां अल्पकालीन तथा मध्यकालीन ऋणों के अलावा अनुत्पादक ऋण भी प्रदान करती है। ऋण प्रदान करने के अलावा इन समितियों का उद्देश्य किसानों में बचत को प्रोत्साहित करना और उनका मानसिक व नैतिक उत्थान करना भी है।

(5) व्यापारिक बैंक *:– इन बैंकों की गतिविधियों को हम दो भागों में बांट सकते हैं :–*

1. राष्ट्रीयकरण से पूर्व का समय *:– 19 जुलाई 1969 से पहले के समय में इन बैंकों का कृषि के विकास में योगदान न के बराबर रहा है। आजादी के बाद सरकारी प्रयत्नों के बाद भी बैंकों ने कृषि क्षेत्र के प्रति उदासीनता दिखाई। इस बात का प्रभाव यह है कि 1951 से 1967 के समय में औद्योगिक क्षेत्र को दिए जाने वाले ऋणों का प्रतिशत 33.5 से बढ़कर 64.3 प्रतिशत हो गया। परन्तु कृषि क्षेत्र में दिए जाने वाली राशि 2.2 प्रतिशत से कम होकर 0.2 प्रतिशत रह गई। इन बैंकों ने जो कुछ भी कृषि क्षेत्र को सहायता प्रदान की वह मुख्यतः व्यापार के क्षेत्र में दी गई, उत्पादन क्षेत्र में नहीं, जैसे – व्यापारिक बैंकों ने कपास, जूट, तलहन, गन्ना, रबर आदि के थोक व्यापार को पूँजी की सहायता प्रदान की।*

2. राष्ट्रीयकरण के बाद का समय *:– 19 जुलाई 1969 के बाद कृषि ऋण के क्षेत्र में इन बैंकों के योगदान की दृष्टि से कई क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है। 30 जून 1969 को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की कुल शाखाएं 7015 थी जो 30 जून 2003 को बढ़कर 66260 हो गयी। वर्तमान में इनकी शाखाओं की कुल संख्या 85,166 है। यह बैंक कृषि विस्तार के लिए अल्पकालीन एवं मध्यकालीन दोनों प्रकार के ऋण प्रदान करते हैं।*

(6) स्टेट बैंक (State Bank of India) *:– स्टेट बैंक व उसके सहायक बैंकों द्वारा कृषि क्षेत्रों में दी गई सहायता को 4 भागों में बांटा जा सकता है –*

1. भूमि बंधक बैंकों को सहायता *:– स्टेट बैंक भूमि बंधक बैंकों के ऋण पत्रों को खरीदरकर, उनकी जमानत पर ऋण देकर अथवा अंतिम ऋण देकर वित्तीय सहायता प्रदान करता है।*

2. सामान्य सहायता *:– यह केन्द्रीय सहकारी बैंकों को सहकारी प्रतिभूतियों के आधार पर सामान्य दर से 1 प्रतिशत कम ब्याज दर पर ऋण प्रदान करता है।*

3. गोदामों के लिए वित्तीय सहायता

4. विपणन संबंधी साख *:– यदि सहकारी बैंक बिक्री तथा अन्य उत्पादक कार्यों में संलग्न बैंकों को ब्याज सुविधाएं देने में असमथ्र है तो स्टेट बैंक उन्हें प्रथम सहायता प्रदान करता है।*

(7) ***कृषि बंधक अथवा भूमि विकास बैंक*** *:– ये बैंक भूमि की जमानत पर कृषकों को दीघ्रकाल के लिए ऋण देते है। ये बैंक उत्पादक* तथा अनुत्पादक दोनों प्रकार का ऋण प्रदान करते है। क्षेत्रीय आधार पर इन बैंक को दो भागों में बांटा जा सकता है :–

1. **प्राथमिक भूमि बंधक (विकास) बैंक** :– ये बैंक कृषकों को मुख्य रूप से ऋण देते हैं।

2. **केन्द्रीय भूमि बंधक (विकास) बैंक** :– ये बैंक प्रायः कृषकों को प्रत्यक्ष ऋण नहीं देते है, वरन् प्राथमिक भूमि बंधक बैंको का निरीक्षण करके उन्हें वित्तीय सुविधाएं देते है।

(8) रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया :– रिजर्व बैंक किसानों को एक रूप से साख प्रदान न करके ब्याज बैंकों के माध्यम से प्रदान करता है। यह सहकारी बैंकों का अल्पकालीन व मध्यकालीन ऋण बैंक दर से 2 प्रतिशत कम दर पर देता है। रिजर्व बैंक अल्पकालीन साख या तो पूर्ण कटौती में अथवा अग्रिमों के रूप में प्रदान करता है।

रिजर्व बैंक दीर्घकालीन ऋण राज्य सरकारें को देता है। ऋण रज्ञज्य सरकारों को दिए जाते है, जिसमें वे सभी साख संस्थाओं के शेयर खरीद सके। इसके अलावा ही बैंक केन्द्रीय भूमि बंधक बैंकों के ऋण पत्र भी दे ले सकता है।

(9) कृषि पुनर्वित व विकास निगम :– पहले इसका नाम कृषि पुनर्वित निगम था। इस निगम की स्थापना 1 जुलाई, 1963 को की गई थी। 15 नवम्बर, 1975 से इसका नाम बदलकर कृषि पुनर्वित व विकास निगम कर दिया गया, इसका मूख्य कार्य कृषि–विकास से सम्बन्धित जिसमें कृषि, पशु–पालन, दुग्ध उद्योग, मछली उद्योग व मुर्गीपालन आदि शामिल है। कार्यक्रमों के लिए पुनर्वित की सुविधाएं प्रदान करना है। यह निगम केन्द्रीय सहकारी भूमि बंधक बैंक, राज्य सहकारी बैंकों तााि अनुसूचित बैंकों के पुनर्वित की मध्यम तथा दीर्घकालीन सुविधाएँ प्रदान करता है। जुलाई, 1982 में इसे NABARD में विलीन कर दिया गया है।

(10) कृषि वित्त निगम :– व्यापारिक बैंकों की कृषि साख बढ़ाने में सहायता प्रदान करने तथा कृषि वित्त संबंधी समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से अप्रैल, 1968 में कृषि वित्त निगम की स्थापना की गयी। यह निगम मुख्य उन्हीं कृषि कार्यों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करेगा जो तकनीकी दृष्टि से उच्च होंगे। इस प्रकार यह निगम एक नयी दिशा में कार्य करेगा।

(11) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक :– ग्रामीण क्षेत्रों के छोटे किसानों, सामान्य कारीगरों तथा भूमिहीन श्रमिकों की साख संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए 2 अक्टूबर,, 1975 को 5 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खोले गए। 30 जून, 1995 को कुल 14506 शाखाएं कार्यरत थी, जो कृषकों को उपकरण यंत्र और पशु खरीदने तााि गोबर गैस संयंत्र लगाने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान कर रहे हैं।

(12) कृषि व ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक (NABARD) :– 12 जुलाई 1982 से कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक (NABARD) स्थापना की गयी है, जो कृषि के लिए निम्न प्रकार शाखा की व्यवस्था करेगा :–

(1) यह राज्य सरकारों को 20 वर्ष तक के लिए ऋण दे सकेगा ताकि वे प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से सहकारी साख समितियों के शेयर पूँजी में हिस्सा ले सकें।

(2) यह 18 माह तक की अवधि के लिए अल्पकालीन साख व सहकारी बैंकों, प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों व अन्य वित्तीय संस्थाओं को प्रदान करेगा, ताकि उसका उपयोग कृषि कार्यों का विशिष्ट उत्पादन व बिक्री क्रियाओं के लिए किया जा सके।

(3) यह केन्द्र सरकार की स्वीकृति पर किसी भी अन्य संस्था को दीर्घकालीन ऋण दे सकेगा, ताकि कृषि व अन्य विकास को प्रोत्साहन दिया जा सके।

(4) यह 18 माह से 7 वर्ष के लिए मध्यमकालीन ऋण व सहकारी बैंकों व प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों को कृषि व इनके रूप द्वारा निर्धारित अन्य कार्यों के लिए दिए जाएंगे।

(5) पुनर्वित के रूप में दीर्घकालीन ऋण भूमि विकास बैंकों प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों, अनुसूचित बैंकों, राज्य सहकारी व अन्य वित्तीय संस्थाओं को कृषिगत व ग्रामीण विकास के लिए दिए जाएंगे।

इस बैंक को कृषि पुनर्वित एवं विकास निगम तथा राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन) कोष एवं राष्ट्रीय कृषि साख (स्थायीकरण) कोष के सभी कार्य हस्तान्तरीक कर दिए गए है।

ग्रामीण घरेलू ऋण का हिस्सा, भारत, 1951–1991 (प्रतिशत)

क्रेडीट एजेंसी	1951	1961	1971	1981	1991
सहकारी और वाणिज्यिक बैंक	5.7	10.3	24.4	58.6	58.8
सरकार और अन्य औपचारिक स्त्रोत	3.1	5.5	7.3	4.6	7.5
संभी संस्थागत एंजेसियाँ	8.8	15.8	31.7	63.2	66.3
पेशेवर और कृषक साहूकार	68.6	62.0	36.1	16.1	17.5
ट्रेडर्स		7.2	8.4	3.1	2.2
जमीदार		7.6	8.6	4.0	4.0
रिश्तेदार और मित्र	14.4	6.4	13.1	11.2	4.6
अन्य स्त्रोत	8.2	0.8	2.1	2.4	2.3
सभी गैर–संस्थागत एजेंसियाँ	91.2	84.0	68.3	36.8	30.6
स्त्रोत निर्दिष्ट नहीं है	0.0	0.2	0.0	0.0	3.1
कुल	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**

वर्तमान में ऐसा अनुमान है कि लगभग 63.56 प्रतिशत ग्रामीण साख औपचारिक स्त्रोतों से और 36.4 प्रतिशत अनौपचारिक स्त्रोतों से आती है। औपचारिक स्त्रोतों में 3.61 प्रतिशत सरकार से, 25.37 प्रतिशत सहकारी संस्थाओं से और 71.02 प्रतिशत बैंकों से है। अनौपचारिक स्त्रोतों में जमीदार से 2.34 प्रतिशत साहूकारों से, 64.05 प्रतिशत दुकानदारों से 4.93 प्रतिशत, रिश्तेदारों और मित्रों से 24.03 प्रतिशत तथा अन्य स्त्रोतों से 4.65 प्रतिशत है।

2. उद्देश्य :–

1. ग्रामीण साख की पूर्ति किन–किन संस्थाओं द्वारा हो रही है, इसका अध्ययन करना।
2. ग्रामीण साख देने वाली संस्थाओं की जानकारी आमजन तक पहुंचाना।
3. विभिन्न योजनाओं के द्वारा ग्रामीणों को मिलने वाले ऋण की जानकारी ज्ञात करना।
4. आजादी के बाद से ग्रामीण साख की पूर्ति में कितना और कैसे परिवर्तन हुआ है उसका अध्ययन करना।
5. ग्रामीण साख की पूर्ति करने वाले औपचारिक और अनौपचारिक स्त्रोतों की जानकारी हासिल करना।

3. शोध प्रविधि :–

प्रस्तुत शोध–पत्र विवरणात्मतक प्रवृत्ति के है, जिसमें केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा जारी विभिन्न ितीयक स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है जिसमें विभिन्न शोध पत्रों, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्ट, इंटरनेट तथा ''भारतीय अर्थव्यवस्था'' नामक पुस्तक का प्रयोग किया गया है।

4. विषय विश्लेषण :–

ग्रामीण साख की पूर्ति मुख्यतः दो प्रकार के स्त्रोतों से की जा रही है। प्रथम औपचारिक स्त्रोत तथा द्वितीय अनौपचारिक स्त्रोत।

आजादी के बाद ग्रामीण साख में अनौपचारिक स्त्रोतों का महत्वपूर्ण योगदान था। साहूकार, महाजन व जमीदार आदि ग्रामीणों सदर से ब्याज वसुलते थे। किसानों को अनौपचारिक स्त्रोतों से ऋण आसानी से उपलब्ध हो जाते थे, उन्हें बिना किसी कागज कार्यवाही से ऋण मिल जाता था। लेकिन जैसे–जैसे देश में शिक्षा का प्रसार होता गया, वैसे–वैसे साख में अनौपचारिक स्त्रोतों का योगदान कम होता गया।

इसी तरह स्वतन्त्रता के बाद से ग्रामीण साख के औपचारिक स्त्रोतों का योगदान बढ़ता जा रहा है, क्योंकि लोगों में जागरूकता बढ़ने लगी है और औपचारिक स्त्रोतों ने भी अपनी ग्रामीण साख सम्बन्धी योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन किया है। औपचारिक स्त्रोतों में सहकारी समितियों के योगदान भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

5. निष्कर्ष :–

1. भारत में वर्तमान में ग्रामीण साख की अधिकता औपचारिक स्त्रोतों से हो रही है। औपचारिक स्त्रोत भी अधिकांश ग्रामीण साख की पूर्ति बैंकों से हो रही है।
2. स्वतन्त्रता के बाद से ग्रामीण साख की अनौपचारिक स्त्रोतों की पूर्ति निरन्तर कम तथा औपचारिक स्त्रोतों से बढ़ रही है।
3. किसानों को उत्पादक कार्यों हेतु ऋण औपचारिक स्त्रोतों से और उत्पादक व अनुत्पादक कार्यों के अनौपचारिक स्त्रोतों से प्राप्त होते है।
4. ग्रामीण साख में कृषि के विकास हेतु अधिकांशः ऋण दिये जाते हैं।
6. ग्रामीण साख में नाबार्ड और सहकारी समितियों का योगदान भी बढ़ रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. महेन्द्र कुमार शर्मा, महेन्द्र राणावत, मानिका दवे, वी.डी. दशोरा (2017) : ''भारतीय अर्थव्यवस्था'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर।
2. रोहिताश चौधरी (2014) : ''भारत में कृषि ऋण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन''।
3. मिहिर शाह, रगू राव और पी.एस. विजय शंकर : ''20वीं सदी के भारत में ग्रामीण साख'', इतिहास और परिप्रेक्ष्य का एक अवलोकन।''
4. वाई. एस.पी. थोराट (2006) : ''भारत में ग्रामीण ऋण : मुद्दे और चिंताएं''।
5. आर्थिक समीक्षा 2018–2019

वेबसाइट –

(i) http://www.indianfarmer.org

(ii) https://ni.vikaspedia.in

(iii) https://books.google.co.in

(iv) Vedantu Learn Live Online

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

संस्कृत साहित्य और रामकाव्य

– डॉ. मीना
सहायक प्राध्यापिका, संस्कृत विभाग
राजकीय कन्या महाविद्यालय,
सेक्टर–14, गुरुग्राम

हमारा साहित्य और हमारी संस्कृति हमेशा से ही हमारे आदर्शों एवं हमारे महापुरुषों के गौरव गान से ओत–प्रोत रहे हैं। वस्तुतः कवियों का मुख्य उद्देश्य न केवल उन आदर्श पुरुषों के जीवन की घटनाओं को उजागर करने से होता है बल्कि वह उनकी जीवनकथा के माध्यम से सम्पूर्ण समाज को कुछ नया सन्देश देना चाहता है। कवि की आन्तरिक मीमांसा कहीं न कहीं ये रहती है कि अगर किसी व्यक्ति का जीवन सामाजिक हुआ है तो अवश्य ही उसमें गुणों का समावेश हुआ होगा तो क्यूं ना अन्य सामाजिक प्राणी भी उनसे लाभान्वित हों। वे अपनी र चनाओं, अपनी कृतियों के माध्यम से मानव जाति के समक्ष उनके उज्ज्वल चरित्र को प्रस्तुत करते हैं। हिन्दी तथा संस्कृत में अनेक कवियों और नाटककारों के द्वारा रामकथा को लेकर बहुत सी रचनाएं लिखी जा चुकी हैं, जिनका उपजीव्य ग्रन्थ महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण ही है। राम एक धीरोदात्त नायक हैं। राम समस्त सांसारिक आदर्शों के पूंजीभूत हैं।

रामकाव्य अथवा रामकाव्य परंपरा से हमारा अभिप्राय उन कवियों एवं काव्यों से है जिन्होंने रामकथा को अपने काव्य का विषय बनाया। रामभक्त कवियों ने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम, महामानव एवं ईश्वर की उपाधि से अलङ्कृत किया है। महर्षि वाल्मीकिकृत रामायण जो संस्कृत भाषा में लिखी है, रामकथा का मूल स्रोत माना जाता है। रामायण को आदिकाव्य के नाम से विभूषित किया जाता है, जोकि 24,000 श्लोकों में निबद्ध है। रामकथा जैसे – जैसे विकसित हुई वैसे – वैसे वट वृक्ष के समान उसकी शाखाएं भी दूर – दूर फैल गई और इन शाखाओं से निकलकर भूमि में प्रविष्ट हो जाने वाली जड़ों ने हर स्थान पर 'यशोधरा' में कहा गया मैथिलीशरण गुप्त का निम्न कथन अत्यन्त सटीक तो है ही साथ में परंपरा की सार्थकता भी सुनिश्चित करता है –

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है ।
कोई कवि बन जाय सहज संभाव्य है ।।

संस्कृत – साहित्य में मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के पावन चरित्र से सम्बद्ध अनेक काव्य तथा अनेक नाटक हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में रामकथा से संबंधित साहित्य का विवेचन कुछ मुख्य बिन्दुओं के अनुसार निम्न है –

- रामकथा का आधार – वाल्मीकीय रामायण
- महाभारत में रामकथा
- पुराणों में रामकथा
- साम्प्रदायिक रामायणों में रामकथा
- संस्कृत ललित साहित्य में रामकथा
- संस्कृत नाटकों में रामकथा
- संस्कृत कथा दृ साहित्य में रामकथा
- आधुनिक संस्कृत साहित्य में रामकथा

इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्कृत – साहित्य में रामकथा का अपार भण्डार है। जिसमें गद्य, चम्पू, नाटक, महाकाव्य और कथा सभी रामकाव्य से ओतप्रोत है। संस्कृत – साहित्य में बहुत सा अंश वाल्मीकि रामायण का है तथा बहुत सी नवीनताएं भी स्थापित की गई हैं। प्रस्तुत शोधपत्र रामायण काल से लेकर वर्तमान तक रामकथा के सम्पूर्ण विकासक्रम को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से लिखा गया है।

(1) वाल्मिकीय रामायण में रामकथा – आदिकाव्यमिदं त्वार्षं पुरा वाल्मीकिना कृतम्। वाल्मीकि रामायण ही वास्तव में रामकथा का मूल आधार है। रामकथा का परिपक्व एवं सधा हुआ रूप सर्वप्रथम रामायण में ही मिलता है। इसी रामकथा का प्रभाव समस्त राम साहित्य पर पडा। वाल्मीकि ने ही सर्वप्रथम स्फुट आख्यानों को संकलित कर कथा के सूत्र में पिरोया और विस्तृत महाकाव्य की रचना की।

रामकथा की दृष्टि से वाल्मीकि रामायण प्राचीनतम है तथा इसका रचनाकाल अनिश्चित है। भिन्न –भिन्न विद्वानों ने इसके बारे में भिन्न दृभिन्न मत प्रस्तुत किये हैं। सर्वप्रथम पाश्चात्य विद्वानों ने रामायण के रचनाकाल के सम्बन्ध में अपने मत व्यक्त किये हैं। पाश्चात्य विद्वान् रामायण की परिकल्पना दो भागों में करते हैं एक भाग वह है जिसकी वाल्मीकि ने रचना की थी, यही वाल्मीकि की प्रारंभिक रचना अथवा आदि रामायण कहलाती है तथा दूसरा रूप यह है जो अब प्रचलित है तथा लम्बे अन्तराल के परिवर्द्धनों के बाद प्राप्त हुआ है। इससे अतिरिक्त जो काल निर्धारित किया है उसमें समय सम्बन्धी अंतराल के कारण अत्यधिक विविधता है, जोकि तर्कों पर आधारित है। जैसे – ए० श्लेगल के अनुसार रामायण 11वीं शताब्दी ई० पू० की रचना है।[1] जी० गोरेसियो ने रामायण का रचनाकाल 12 वीं शताब्दी ई० पू० माना है।[2] एच० याकोबी प्रचलित रामायण का रचनाकाल दूसरी शताब्दी ई० पू० मानते हैं।[3] एम० विन्टरनित्स के अनुसार भी रामायण का यही काल है।[4] ए० बी० कीथ ने रामायण की रचना चौथी शताब्दी ई० पू० मानी है।[5] डा० बुल्के भी इसी मत से सहमत है।[6] इन सबका मतैक्य न होने से ये किसी एक निश्चित मत पर नहीं पहुंच पाए हैं। प्रचलित रामायण के तीन पाठ मिलते हैं – दाक्षिणात्य पाठ, गौडीय पाठ और पश्चिमोत्तरीय पाठ।

चूंकि संस्कृत साहित्य में रामकथा का अपार भण्डार है अतः सुविधा की दृष्टि से इसे दो भागों में बांट लेना उचित है।

(2) महाभारत में रामकथा – वाल्मीकि रामायण के अनन्तर महाभारत में ही रामकथा का विकास हुआ है। महाभारत के मुख्य 4 ऐसे स्थल हैं जहां रामकथा का वर्णन किया गया है – स्वर्गारोहण पर्व, आरण्यक पर्व, द्रोण पर्व तथा शांति पर्व। महाभारत में अन्यत्र भी वाल्मीकि और रामायण का उल्लेख आया है। महाभारत में रचित रामायण की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें रामकथा का ऐतिहासिक रूप अधिक नहीं बदला है किन्तु धार्मिक भक्ति – भावना के कारण ऐतिहासिक पुरुष अवतारी राम बन गये। रामायण के विकास का यह एक महत्वपूर्ण सोपान है, रामायण के अनन्तर तथा महाभारत के पूर्व इस मध्यावधि में रामकथा का परिवर्तन किस प्रकार हुआ, यह कहना कठिन है। इसके पीछे संस्कृति का ही योगदान रहा है।

(3) पुराणों में रामकथा – भक्ति के विकास में अवतारवाद की प्रतिष्ठापना के साथ ही रामकथा का क्षेत्र विस्तृत होता गया। धार्मिक साहित्य के अन्तर्गत हरिवंश, अनेक महापुराण, योग वासिष्ठ रामायण, अध्यात्म रामायण आदि आते हैं। पुराणों में रामकथा – हरिवंश पुराण का रचनाकाल 500 ई० माना जाता है। इसमें रामकथा का संक्षिप्त उल्लेख मिलता है तथा दो ऐसे प्रसंग हैं जिनका कथा में वर्णन नहीं है। एक तो दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ का तथा दूसरा अयोनिजा सीता का। विष्णु एवं भागवत महापुराण में भी रामकथा को स्थान मिला है। इनके अतिरिक्त कूर्म, वाराह, अग्नि, लिङ्ग, नारदीय, वामन, गरुड, ब्रह्म – महापुराणों तथा अन्य नृसिंह, वह्नि, महाभागव, कलिका, आदि, कल्कि पुराण आदि पुराणों में रामकथा का अंश पाया जाता है।

(4) साम्प्रदायिक रामायणों में रामकथा –

(क) योगवासिष्ठ रामायण – आठवीं शताब्दी के आसपास इसकी रचना मानी जाती है।[7] इसमें राम तथा ऋषि वसिष्ठ का संवाद है। इसे ही महारामायण, आर्ष रामायण, वासिष्ठ रामायण तथा ज्ञानवासिष्ठ आदि नामों से भी जाना जाता है। इसमें वसिष्ठ राम को मोक्ष प्राप्ति पर एक वृहद् उपदेश देते हैं। छः प्रकरणों तथा 32,000 श्लोकों से युक्त इस रामायण की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें योग का प्रतिपादन होने के साथ – साथ कर्म तथा भक्ति का भी समावेश है। विद्वत्जनों के मतानुसार योगवासिष्ठ में सुख – दुःख, जरा – मृत्यु, जीवन – जगत्, जड – चेतन, लोक – परलोक, बन्धन – मोक्ष, ब्रह्म – जीव,आत्मा – परमात्मा, ज्ञान – अज्ञान, सत् – असत्, मन – इन्द्रियां आदि विषयों पर गंभीर एवं सूक्ष्म विश्लेषण मिलता है।

(ख) अध्यात्म रामायण – यह रामायण सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती है। 14 वीं – 15 वीं शताब्दी के लगभग इसका रचनाकाल माना जाता है। अध्यात्म रामायण भी योगवासिष्ठ के समान संवादात्मक है। अध्यात्म रामायण में घटनाओं की योजना इस प्रकार से की गई है कि वे राम के अलौकिकत्व को व्यक्त करती हैं। बाद की रामायणों पर भी इसका प्रभाव परिलक्षित होता है।

(ग) अद्भुत रामायण – अध्यात्म रामायण के बाद अद्भुत रामायण की रचना हुई। इसमें रामकथा को विस्तृत रूप देकर तीन भागों में प्रस्तुत किया है – रामावतार, वाल्मीकि रामचरित तथा सीता द्वारा देवी रूप में रावण का वध करना।

(घ) आनन्द रामायण – डा० कामिल बुल्के द्वारा इसका रचनाकाल सामान्यतः 15 वीं शताब्दी माना गया है। 9 काण्डों में विभक्त इस रामायण में 12252 श्लोक हैं । इसमें राम के उत्तरार्ध जीवन की कथा को अत्यधिक विस्तार प्राप्त है। इसमें मूल रामायण के कथांशों को आधार मान कर बहुत अधिक परिवर्तन किया गया है। रावण द्वारा कौशल्या हरण, सीता स्वयंवर में रावण की उपस्थिति, सीता द्वारा चंडी रूप में रावणवध, तथा वाल्मीकि के पूर्वजन्मों का वर्णन आदि अनेक ऐसे दृश्य हैं जो मूल रामकथा से पृथक् है।

(ङ) तत्वसंग्रह रामायण – इसकी रचना राम ब्रह्मानन्द ने 17 वीं शताब्दी में की थी। इस का मुख्य उद्देश्य राम के परब्रह्म रूप का प्रतिपादन करना है। रामभक्ति की दृष्टि से इस रामायण में राम की दास्य भक्ति के साथ – साथ राम की अद्वैत भक्ति को भी दर्शाया गया है।

(च) भुशुण्डी रामायण – यह रामायण मूल रामायण तथा आदि रामायण के नाम से प्रसिद्ध है इसमें पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चार खंड हैं।

(छ) महारामायण – इसकी रचना जानकी जीवनदास ने वि० सं० 1945 में की थी। इसमें राम की सख्य भाव से उपासना की गई है।

(ज) वेदान्त रामायण – इसमें परशुराम के चरित्र का वर्णन किया गया है। इसमें राम के द्वारा वाल्मीकि जी से प्रश्न किया गया है कि परशुराम ने क्षत्रियों का नाश क्यों किया था। इसके अतिरिक्त मंत्र रामायण, संवृत्त रामायण, मंजुल रामायण, देव रामायण आदि ऐसी कई रामायण हैं जिनमें रामकथा आई है।

अन्य संस्कृत धार्मिक साहित्य में रामकथा –

इनसे अतिरिक्त जैमिन भारत, जैमिनीयाश्वमेघ, सत्योपाख्यान, बृहत्तकौशलखंड, धर्मखंड, हनुमत्संहिता आदि में रामकथा का सर्वथा परिवर्तित रूप दृष्टिगोचर होता है।

(5) संस्कृत ललित साहित्य में रामकथा – इसके अन्तर्गत महाकाव्य, नाटक, कथा साहित्य आदि आते हैं। जैसे महाकाव्यों में –

(क) रघुवंश – कालिदास द्वारा रचित लालित्यपूर्ण महाकाव्य रघुवंश की कथावस्तु 19 सर्गों में निबद्ध है रघुवंश में रामकथा का वर्णन 9 वें सर्ग से 15 वें सर्ग तक किया गया है । इसमें इक्ष्वाकुवंश के 29 राजाओं का वर्णन है। यह कथा वाल्मीकि रामायण पर आधारित है । किन्तु इसमें कुछ परिवर्तन अवश्य किया गया है ।

(ख) रावणवध अथवा सेतुबन्ध – इसके रचनाकार राजा प्रवरसेन है तथा इसका रचना समय पांचवीं – छठी शताब्दी के आसपास माना जाता है। इसमें रावणवध का वर्णन है जो कि 15 सर्गों में विद्यमान है। सेतुबन्ध में मछलियों द्वारा सेतु नष्ट करने का उल्लेख आया है इसमें वाल्मीकीय रामायण के प्रथम 6 काण्डों की कथा विद्यमान है। व्याकरण के नियमों के निरूपण के साथ – साथ यह रचना अलंकृत शैली की है।

(ग) भट्टिकाव्य अथवा रावणवध – छठी – सातवीं शताब्दी में रचित इस महाकाव्य के 22 सर्गों में युद्धकाण्ड तक की रामकथा आयी है। राम लक्ष्मण द्वारा खरदूषणादि राक्षसों के वध का वर्णन दर्शाया गया है।

(घ) जानकीहरण – आठवीं शताब्दी में कुमारदास द्वारा रचित इस महाकाव्य के 25 सर्गों में शृङ्गारात्मक वर्णन किया गया है । इसमें दशरथ तथा उनकी पत्नियों का जलक्रीडा विहार का प्रसंग है तथा राम एवं सीता के पूर्वानुराग का भी उल्लेख आया है।

(ङ) रामचरित – 9 वीं शताब्दी में अभिनन्द द्वारा रचित इस महाकाव्य में राम हनुमान को एक अंगूठी के अतिरिक्त एक नुपूर तथा स्तनोत्तरीय भी देते हैं। इसमें रावण के संभोग शृङ्गार का वर्णन विस्तार से आया है।

(च) रामायण मंजरी – क्षेमेन्द्र द्वारा रचित इस काव्य में समस्त कथा रावण की दृष्टि से कही गई है तथा इसमें रामायण के पश्चिमोत्तरीय भाग का वर्णन किया गया है।

(छ) दशावतार चरित – क्षेमेन्द्र द्वारा रचित यह 11वीं शताब्दी की रचना है जोकि 294 छन्दों में निबद्ध रामकथा से युक्त है।

(ज) उदार राघव – साकल्यमल द्वारा रचित यह 14वीं शताब्दी की रचना है। इसमें राम विलास वर्णन तथा शूर्पणखा वृत्तान्त प्रमुख है।

(झ) जानकी परिणय – यह चक्र कवि द्वारा रचित 17 वीं शती की रचना है जोकि 8 सर्गों में विभाजित है।

(ञ) राघवोल्लास – अद्वैत कवि द्वारा रचित यह कृति गोस्वामी तुलसीदास की समसामयिक है। यह रचना 12 सर्गों में विभक्त है।

(6) संस्कृत नाटकों में रामकथा – संस्कृत साहित्य में नाटक – साहित्य का समृद्ध रूप रहा है। रामकथा से संबंधित बहुत से नाटक रचे गये जिनमें से कुछ तो आधुनिक समय में उपलब्ध नहीं हैं। संस्कृत में आये नाटकों का वर्णन इस प्रकार है –

(क) प्रतिमा नाटक – कविवर भास द्वारा रचित यह नाटक छठी शताब्दी का है। इसमें राम के राज्याभिषेक की तैयारी के समय से लेकर भरत द्वारा राम को राज्य सौंपने तक की कथा कुछ नवीनताओं सहित विद्यमान है।

(ख) अभिषेक नाटक – इसमें किष्किन्धा काण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक की कथा का वर्णन है। इसमें राम के विष्णुत्व का तथा सीता का लक्ष्मी रूप में प्रतिपादन किया गया है।

(ग) महावीर चरित – भवभूति द्वारा रचित इस नाटक का समय आठवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। रामकथा का वर्णन करने वाले नाटकों में यह एक सशक्त नाटक है। 7 अङ्कों में निबद्ध इस नाटक में कुछ नवीन परिवर्तन मिलते हैं। इसमें राम – सीता विवाह से लेकर राम के राज्याभिषेक तक की कथा मिलती है। यथा – विश्वामित्र आश्रम में ही राम – लक्ष्मण और सीता – उर्मिला।[8]

(घ) उत्तररामचरित – यह करुण रस प्रधान नाटक है जिसमें भवभूति ने वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा को चित्रित किया है। इसके सप्तम अङ्क में वाल्मीकि आश्रम में अयोध्या की जनता के सामने सीता – त्याग, कुश – लव जन्म प्रसङ्गों से युक्त एक वाल्मीकिकृत नाटक खेला जाता है। परिणामस्वरूप लोग सीता की निर्दोषता स्वीकार करते हैं तथा राम सीता और लव – कुश सहित घर लौटते हैं।

(ङ) उदात्तराघव – 8 वीं शती में अनङ्गहर्ष मायुराजकृत यह 6 अङ्कों की एक ऐसी रचना है जो अनेक नवीनताओं से युक्त है। इसमें सीता हरण की कथा बिल्कुल नये ढंग से प्रस्तुत हुई है।

(च) कुन्दमाला – कुन्दमाला राम के उत्तर जीवन पर आधारित है। इसके रचयिता के रूप में दिङ्गनाग का नाम लिया जाता है।

(छ) अनर्घराघव – मुरारि द्वारा रचित इस नाटक की रचना लगभग 900 ई० सन् के आसपास हुई थी। इसमें विश्वामित्र के आगमन से लेकर राम के अयोध्या प्रत्यागमन एवं अभिषेक तक की आई है।

(ज) बालरामायण – यह नाटक 10 वीं शताब्दी में राजराजेश्वर द्वारा रचित है । 10 अङ्कों में निबद्ध इस नाटक में सीता स्वयंवर से लेकर रामाभिषेक तक की कथा है।

(झ) हनुमन्नाटक –10 वीं शताब्दी में रचित यह नाटक 14 अङ्कों में विभाजित है। इसमें पूरे रामचरित को दर्शाया गया है।

(ञ) आश्चर्यचूडामणि – 9 वीं शताब्दी में यह नाटक शक्तिभद्र द्वारा रचित है। इस नाटक में शूर्पणखा आगमन से लेकर सीता की अग्नि परीक्षा तक की कथा विद्यमान है।

(त) प्रसन्नराघव – यह 12 – 13 वीं शती के आसपास जयदेव द्वारा रचित नाटक है। इसमें 7 अङ्कों में रामकथा वर्णित है।

(थ) उल्लासराघव – इसकी रचना 13 वीं शताब्दी में सोमेश्वर द्वारा की गई। इसमें बालकाण्ड से युद्धकाण्ड तक की कथा है। इनके अतिरिक्त अद्भुतदर्पण, जानकी परिणाम, मैथिली कल्याण, दूतांगद, रामाभ्युदय (अनन्दाचरण चूडामणि) आदि संस्कृत नाटक आए हैं।

(7) कथा साहित्य में रामकथा – संस्कृत साहित्य में महाकाव्य तथा नाटकों के अतिरिक्त कथा साहित्य में भी रामकथा आई है, परन्तु इसमें रामकथा का विस्तृत रूप नहीं मिलता है। कथा साहित्य की प्राचीन कथा गुणाढ्यकृत बृहत्कथा में रामकथा वर्णित हुई है। सोमदेव रचित कथासरित्सागर में भी 3 बार रामकथा आई है। 17 वीं शताब्दी में रचित वासुदेवकृत रामकथा में वाल्मीकि के 6 काण्डों की संक्षिप्त कथा है।

(8) आधुनिक संस्कृत साहित्य में रामकथा – अभिनन्द का रामचरितमहाकाव्य, कृष्णप्रसाद शर्मा धिमिरे का श्रीरामविलाप, कैलाशनाथ भटनागर का रामवनगमनम्, गौरी कुमार वर्मा का दशग्रीववधमहाकाव्यम्, त्रिपुरारिशरण पाण्डेय का रामामरचरितामृतम्, दशरथ द्विवेदी का जानकी जीवनमहाकाव्यम्, प्रतिमा शास्त्री का स्वातन्त्र्योत्तर युग में संस्कृत रामकाव्य, प्रभात शास्त्री का जानकीगीतम्, भि० वेलणकर का बालगीत रामचरितम्, मंगलदेव शर्मा का श्रीहनुमद्विजयम्, रमाशंकर तिवारी का वैदेह्या, राजेन्द्र मिश्र का जानकीजीवनम्, रामजी उपाध्याय का सीताभ्युदयम्, रामावतार मिश्र का देवीचरितम्, रेवाप्रसाद द्विवेदी का उत्तरसीताचरितम्, लछमन सिंह अग्रवाल का श्रीरामरासायनम्, विश्वनाथ सिंह जूदेव का सङ्गीतरघुनन्दनम्, श्रीरामभद्राचार्य का श्रीराघवाभ्युदयम्, सत्यव्रत शास्त्री का श्रीरामकीर्तिमहाकाव्यम्, शिवशंकर त्रिपाठी का रामकर्णामृतम्, हर्य्याचार्य का जानकीगीतम्, हरिनारायण दीक्षित का हनुमद्दूतम्, हरिहरानन्द का हनुमच्चरित्रवाटिका।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि आधुनिक समय में भी रामायणकथा अपने उच्चादर्श सांस्कृतिक विकास तथा वैज्ञानिक उत्कर्ष को मानव जीवन में मूल्यों से अभिसिक्त करके अभिप्रेरित कर रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

(1) ए० डब्ल्यू० श्लेगेल, जर्मन ओरियन्टल जर्नल, भाग – 3
(2) जी गोरेसियो, रामायण, भाग – 10, भूमिका
(3) एच० याकोबी, डास रामायण, पृ० 100
(4) एम० विंटरनित्स, हिस्ट्री आफ इंडियन लिटरेचर, भाग –1, पृ० – 517
(5) ए० बी० कीथ, दि एज आफ दि रामायण, ज० रा० ए० सो० 1915, 318 – 328
(6) डा० बुल्के, रामायण, पृ० – 34
(7) कल्याण संक्षिप्त योगवशिष्ठ अंक, जानकीनाथ शर्मा, पृ० – 5 , 6
(8) कृष्ण चौतन्य, अनु० – विनयकुमार राय, संस्कृत साहित्य का नवम् इतिहास, पृ० – 365 , 366
(9) संस्कृतसाहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवनम्, वाराणसी।
(10) संस्कृतसाहित्य का इतिहास, उमाशङ्करऋषिः, चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी।
(11) संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, डा. कपिलदेव द्विवेदी।
(12) संस्कृतसाहित्य का इतिहास, एस. के. डे.।
(13) History of Sanskrit Literature – M- Krishnammachari-
(14) प्राचीन भारतीय साहित्य प्रथम भाग, प्रथम खण्ड (हिन्दी अनुवाद), विटरनिट्ज, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

अन्तर्जालस्रोतांसि –

- www-archive-org
- www-sanskrit-nic-in
- www-scribd-com
- www-sanskritbooks-org
- www-sanskritworlds-com
- www-sa-m-wikipedia-org
- sanskritdocuments-org
- sanskritlibrary-org

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

''भक्ति आंदोलन व सामाजिक सुधार आंदोलनों का समाज पर प्रभाव''

– डॉ. श्रवण कुमार बरोड़
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्
राजकीय महाविद्यालय सज्जनगढ़,
बांसावाड़ा, राजस्थान

प्रस्तावना – भक्ति आंदोलन व समाज सुधार पर अध्ययन करते समय भक्ति आंदोलन के जो समाज सुधारक थे चाहे वे कबीर, तुलसी, नानक, रैदास, महाप्रभु चैतन्य आदि हों। इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि ये सभी विचारक मुख्य रूप से धार्मिक नेता थे। और इनके द्वारा जो भी सामाजिक कार्य व समाज सुधार के कार्य किए गए हैं, वे धार्मिक उद्देश्य से ही किए गए हैं। किंतु यह कोई नई बात नहीं है, धर्म उस युग की नीव के समान है और कोई भी विचारधारा चाहे वह धर्म, विज्ञान से संबंधित क्यों न हो धर्म के प्रभाव से अछूती नहीं रही।

सामाजिक सुधार आन्दोलन इस तथ्य का प्रमाण है कि पूरा का पूरा पुनर्जागरण आन्दोलन धर्म के केन्द्र में रखकर छेडा गया। समाज में व्याप्त अनेको सामाजिक कुरीतियों, धर्म परिवर्तन, धार्मिक कट्टरता, जाति व्यवस्था, अनेको सामाजिक कुरीतियों पर भक्ति आन्दोलन के सामाजिक नेताओं द्वारा कुठाराघात किया गया। भक्ति आन्दोलन में समाज सुधार की भावना कहीं गहरे रूप में समाहित है। भक्ति आन्दोलन का अध्ययन जब भी किया गया, तो हमेंशा से ही इस बात पर विवादास्पद स्थिति बनी, कि ये सभी सामाजिक व धार्मिक विचारक नहीं है। कवि मात्र है। क्योंकि इन विचारकों ने अपने विचार कविता के माध्यम से प्रकट किए है। परन्तु उस युग में कविता विचारों को व्यक्त करने की प्रमुख माध्यम थी।

धर्म तथा समाज सुधार आन्दोलन – धर्म तथा समाज सुधार आन्दोलन का अध्ययन करते समय जैसे ही 13 वीं सदी में प्रवेश किया जाता है। तो यह बात सामने आती है कि 13 वीं सदी को हिन्दू सभ्यता का अंधकार युग कहा जाता है। इस युग में मुस्लिम सम्राज्य का विस्तार बहुत तेजी से हो रहा था। इस अंधकार युग में महान समाज सुधारक रामानन्द का जन्म 1299 में प्रयाग में कान्यकुब्ज ब्राहमण परिवार में हुआ।

इनका मूल उद्देश्य धर्म व भक्ति के माध्यम से समाज सुधार करना था। इन्होंने परस्पर भाई चारे की बात की हिन्दू–मुस्लिम एकता पर जोर दिया। आदमी का आदमी पर शोषण गलत बताया। जात–पात में व्याप्त कटुता को समाप्त करने का प्रयास किया।

इस उदारवादी दृष्टिकोण के कारण उनके शिष्य प्रत्येक जाति में से हुए जिन्होंने आगे चलकर समाज सुधार कार्य को अपने हाथों में लिया। उनके शिष्यों में मुख्य थे– रैदास 'चमार', कबीर 'जुलाहा', धन्न 'जाट किसान' सेना 'नाई', पीपा 'राजपूत' और कबीर को अपना शिष्य बनाकर उन्होंने हिन्दू–मुस्लिम समन्वयवादी दृष्टिकोंण का संदेश समाज को दिया। उनके विचार से प्रभावित होकर उत्तर भारत में कबीर, महाराष्ट्र में नामदेव और उनके उत्तराधिकारी पंजाब में नानक एवं बंगाल में चैतन्य ने समाज और धर्म सुधार कार्य को नई दिशा और कार्य करने की प्रेरणा प्रदान की।[1]

समाज सुधारक कबीर – कबीर अपने युग के कडे आलोचक थे। कबीर एक समाज सुधारक से अलग कुछ नहीं थे। तत्कालीन समाज की दुर्दशा देख पीडा से हृदय फटता था। समाज की विचलन प्रक्रिया से कबीर खिन्न रहते थे। बिखरे हुए समाज को एक सुंदर रूप देने के लिए निरंतर कार्य किया कि उनका प्रस्तावित समाज कैसा होना चाहिए।

क्रांतिकारी कबीर का आविर्भाव उस समय हुआ जब संपूर्ण भारतवर्ष पर मुस्लिम प्रशासन की स्थापना हो चुकी थी। हिंदुओं को गुलामों जैसा जीवन यापन करना पडता था। निर्धनता के कारण उनकी घर की स्त्रियां मुस्लिमों के यहॉ कार्य करके अपना पेट भरती थी। ऐसी स्थिति में क्रांतिकारी कबीर समाज सुधारक का जन्म 1425 ई. में एक विधवा ब्राहमणी के गर्भ में हुआ।[2]

1) **साम्प्रदायिकता का विरोध** – कबीर ने हिंदू मुसलमानों दोनो ही धर्मों के बाह्य आडंबरों पर कठोर कुठाराघात किया। उन्होंने बाह्य आडंबरों का जमकर विरोध किया। ईश्वर, अल्लाह से अंतर्मन से जुडने पर जोर दिया।

खुदा से अपनी बात खुद करो फिर इसके लिए किसी विशेष पहनावे या आचरण अपनाने की आवश्यकता नहीं है। न ही किसी प्रकार के बाह्य आडंबर की आवश्यकता है।

इसी प्रकार उन्होंने मुसलमानों के अन्य बाह्यचारों अजान, कुर्बानी तथा हज का विरोध भी किया। वे जाति व्यवस्था का विरोध करने से भी नहीं चूके, क्योंकि कबीर के समय जाति व्यवस्था कॉफी जटिल हो चुकी थी। इस व्यवस्था में शूद्रों की निम्नतम स्थिति थी। कबीर ने उनका डटकर विरोध किया –

ऊचें कुल का जनमिया, करनी ऊंच न होय ।

सुबरन कलश सुरा भरा, साधो निन्दा सोय ।[3]

ii) **मानयतावादी कबीर** – संत कबीर मानवता के पुजारी थे हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, यहूदी किसी भी धर्म को मानने वाले हो सबमें एक ही धारा प्रवाहित करते थे – मानवता की धारा।

कबीर का सशख्त मत था, कि मानव का मानव पर शोषण समाप्त हो। जो मानव है वे सभी एक ही पिता की संतान है। इसी कारण कबीर शोषक व शोषित का भेद मिटाकर साम्य स्थापित करना चाहते थे। मानव वह है जो पीडित मानव की पीडा को मानवता से समझें न कि धर्म व सम्प्रदाय से। कबीर को मानव कल्याण के लिए समाज से जो भी प्राप्त हुआ उसे स्वीकार किया और शेष को अस्वीकार सम्पूर्ण जीवन कबीर ने भाई चारे व मानवता की बात पर ही जोर दिया। पाखंड जात–पात छोटा बडा इन बातों का कबीर ने कभी समर्थन नहीं किया।

मातृ–पिता बालकन्ह वंहि

उदर भाई सोई पाठ पढ़ावहिं ।

देवस्थलों एवं तीर्थो की दशा चिंतनीय थी। वे नाना प्रकार के छद्म तथा अनाचार के अड्डे हो गए थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो कलयुग अपने दल–बल सहित वहां किला बन्दी कर रहा है।''[4]

निष्कर्ष – मध्य युगीन भारतीय समाज और समाज सुधार आंदोलन का विश्लेषण करकर इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि इस युग में समाज सुधार के महत्वपूर्ण तथ्य सामने आएँ। इन प्रयासों द्वारा समाज को बदला भी गया व समाज की समाज में व्याप्त जटिल बीमारियों जात–पात साम्प्रदायिकता बाह्य धार्मिक आडम्बरों से मुक्त कराने के प्रयास किए गए। मानवता को सर्वोपरि रखा गया। सामाजिक कुरीतियों पर जोरदार कुठाराघात किया गया। एक समतामूलक मानवतावादी समाज की स्थापना करने का प्रयास किया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.	सिंह वी.एन. सिंह जनमेजय	भारत में सामाजिक आन्दोलन	पृष्ठ क्रं. 76 पृष्ठ क्रं. 77
2.	सिंह वी.एन. सिंह जनमेजय	भारत में सामाजिक आन्दोलन	पृष्ठ क्रं. 77
3.	सिंह वी.एन. सिंह जनमेजय	भारत में सामाजिक आन्दोलन	पृष्ठ क्रं. 79
4.	तुलसी दास	दोहावली दो	पृष्ठ क्रं. 558

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

संत नितानन्द का नारी चिन्तन

– डॉ. कृष्णा मल्हान
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय से.–9,
गुरुग्राम

संक्षेप –

सन्त नितानन्द मध्यकालीन निर्गुण काव्य–परंपरा की आधुनिक कड़ी हैं। सभी सन्तों ने नारी के प्रमदा रूप की निन्दा की है और पतिव्रता नारी की प्रशंसा। संत नितानन्द ने भी अपनी वाणी में भक्त नारी की स्तुति की है और कामिनी नारी जो भक्ति के मार्ग में बाधक है उस रूप की आलोचना की है।

प्रस्तावना –

सन्त नितानन्द की वाणी 'सत्य–सिद्धान्त–प्रकाश' में नारी विषयक धारणा वही है जिसे सभी सन्तों ने स्वीकार किया है। इनका नारी के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण है। भक्त नारी इनके लिए वंदनीय है और साधना के मार्ग में बाधा डालने वाली नारी का कामिनी रूप निंदनीय है।

कई विद्वान संतों को नारी–निंदनीय मानते हैं। किन्तु सम्यक् अध्ययन से पता चलात है कि संतों का नारी के प्रति बहुत उच्चकोटि का भाव है। इस तथ्य से सभी अवगत हैं कि अधिकांश सन्त सद्–गृहस्थ हुए हैं। इनके भी पत्नी एवं बच्चे रहे हैं। सन्त व्यावहारिक जीवन में नारी को पत्नी, बहन, माता और पुत्री रूप में यथायोग्य सम्मान देते रहे हों औरकथनी के स्तर पर उनकी निन्दा करते रहे हों, यह सम्भव नहीं है। कम से कम सन्तों के विषय में तो यह मान ही नहीं सकते। कारण कि सन्तों की कथनी और करनी में साम्य होता है। करनी और रहनी कुछ और, कथनी कुछ और यह बात सन्तों के आचरण के विरूद्ध ठहरती हैं। ये तो कथनी और करनी में भेद सहन ही नहीं कर सकते। दूसरी ओर बात जो इनकी बानी में देखने पर स्पष्ट तौर पर सामने आती है वह यह कि सभी सन्तों ने पतिव्रता, भक्त–माता तथा भक्त–नारी के रूप में नारी को वन्दनीय माना है। इतना ही नहीं पतिव्रता नारी तो इनके लिए एकनिष्ठ भक्ति के लिए आदश–रूप रही है। अनेक भक्त–नारियों का उल्लेख इनकी बानी में आया है और ये उन्हें प्रणम्य रूप में स्मरण करते हैं। सन्तों ने केवल नारी के प्रमदा–रूप की ही अवहेलना की है। नारी का कामिनी–रूप इन्हें इनकी भक्ति में बड़ी बाधा लगता है। इसके प्रति दुर्निवार आकर्षण इन्हें बहुत खलता है। नारी के इसी रूप से बचाव के लिए सन्त सामान्य मनुष्य को चेतावनी देते हैं। जहाँ सचेत करने ी बात हो वहाँ सामान्य बात को भी प्रभावशाली बना कर कहना होता है और समझाते–समझाते थोड़ा कहीं सन्त क्षुब्ध तथ कट भी हो जाते हैं। क्योंकि संतों का तो इस संसार और सांसारिकता की अच्छाई और बुराई नापने का एक ही निकष है कि जो कोई भी इनकी भक्ति में बाधक बनता है वह इन्हें पूर्णतया अस्वीकार है, इसमें नारी ही क्यों कामी नर की भी खूब भर्त्सना करते हैं। पुत्र, पिता एवं बन्धु–बान्धव जो भी इनके भक्ति–भजन में बाधक बनते हैं, वह इनके अपने नहीं हैं, उससे उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। नारी के प्रमदा रूप के प्रति अधिक बरस पड़े हैं, शायद इन्हें यह सब बन्धन–स्वरूप अधिक खलता हो। इस कारण यदि आलोचना थोड़ी अधिक हो गई हो तो इससे इन्कार नहीं किया जा सकता।

''माथा' के संदर्भ में सन्तों की नारी निषयक धारणा का उल्लेख करते हुए डॉ. राजदेव सिंह का कहना है कि व्यवहारिक और आध्यात्मिक जीवन की सर्वाधिक बलवती बाधा 'काम' है। वैसे तो सभी इन्द्रियों के विषयों का ग्रहण काम के अन्तर्गत होता है पर अपने विशिष्ट अर्थ में यह काम स्त्री–पुरुष–विषयक आसक्ति का वाचक है। सन्त इस काम के कट्टर विरोधी हैं। ..... और चूंकि स्त्री काम का सर्वाधिक प्रबल शस्त्र है, अतः यह सबसे भयंकर है। .....नारी की यह सारी बुराई उसकी काममयता के कारण है और काममयता माया है इसीलिए नारी भी उनके मत से माया है सो त्याज्य है।[1]

इसी मत को और अधिक पुष्ट करते हुए डॉ. मन मोहन सहगल का कहना है कि निन्दा अथवा तिरस्कार का स्वर नारी के लिए न हो कर नारी के कारण जिस पथ भ्रष्टता एवं वासना का उदय होता

है, उसी के लिए है। यौनाकर्षण मात्र का विरोध तो युग–युग से होता आया है। वैदिक ऋषियों, उपनिषद्कारों, शस्त्राज्ञों, योगियों–सिद्धों, सन्त–महात्माओं आदि सबने नारी के काम–विषयक रूप की ही भर्त्सना की है। नारी के सात्विक रूप की निंदा किसी भी धर्म–शास्त्र में नहीं मिलती है।[2] नारी के प्रमत्त रूप तथ इसके विषैले प्रभाव का उल्लेख करते हुए नितानन्द जी का कहना है कि यह विषैली नागिन है, तीनों लोक इसके विषय–दंश से प्रभावित हैं, केवल हरिचरण–शरण में ही इसके विषय से बचा जा सकता है।[3] यह ऐसी नागिन है जिसका विषय–दंश बाहर ही नहीं दिखता, यह भीतर से डसती है। इसके विषय–दंश की कोई औषधि–उपचिार नहीं है।[4]

जो अज्ञानी होते हैं वे इसे जहर जानकर भी बड़े चाव से अमृतोपम जान कर इसका भोग करते हैं। नितानन्द का कहना है कि जो बड़े चाव से इस चहर को खाते हैं, वे तो मरेंगे ही। नीचे लिखी साखी इसी आशय को निर्देशित कर रही है, यथा–

जहर जान अज्ञान नर, अमृत ठहराई।
नितानन्द वे मर गए, जिन हित कर खाई।।[5]

कामी मनुष्य की क्या दुर्गति होती है इसका उल्लेख करते हुए नितानन्द जी का कहना है कि कामी नरक का कीडा होता है, नरक में रहता है तथा अमृत छोड़ विष का भक्षण करता है। यह कामी मनुष्य यों ही जन्म गंवाता है, यथा–

कामी कीड़ा रम रहया, नरक कुंड में मोंहि।
नितानन्द अति प्रीत से, बहे मूल में जाहि।।[6]

नितानन्द जहाँ नारी के कामिनी रूप के प्रति कटु और रूखे हैं वहीं भक्त–माता के प्रति श्रद्धा से नताशीर हैं, यथा –

भक्ति करावै पुत्र पै, नितानन्द सो माय।
और नार सम नागनी, वहे जने वही खाय।।
जिन तै हरिजन उपजै, तिन को नार न जान।
नर–नारी सम भक्त हैं, जिनके अन्तर ध्यान।।[7]

इसी प्रकार पतिव्रता नारी को भी नितानन्द जी वन्दनीय मानते हैं, यथा –

जो कुछ पति आज्ञा करे, धरे आपने सीस।
सो नार सुलक्खनी, मिलै ताहि जगदीश।।[8]

पतिव्रता नारी नितानन्द जी के लिए एकनिष्ठ भक्त की परिचायिक है। पतिव्रता के शील एवं चरित्र का आख्यान प्रस्तुत करते हुए इनका कहना है कि–

तन सुबुद्ध मन निर्मलता, अन्तर्गत में ध्यान।
नितानन्द सुन्दर सुघड़, पतिव्रत अंग पिछान।।[9]

सच्चा साधक और पतिव्रता एक से होते हैं। नितानन्द जी के अनुसार उनकी रहनी अगाध और अनुपम होती है, यथा–

अगम पन्थ को पग धरें, पतिव्रता और साध।
नितानन्द सब जगत में, उनका पत्न अगाध।।[10]

पतिव्रता को नितानन्द जी कितना मान–सम्मान देते हैं इसका अनुमान सहजता से निम्न साखी के माध्यम`स लगाया जा सकता है, यथा–

पतिव्रता के चरण की, धरूँ सीस पर धूर।
सभी दासन की दास मैं, नितानन्द अति कूर।।[11]

पतिव्रता को किसी श्रृंगार अथवा प्रसाधन की आवश्यकता नहीं है, उसका चरित्र एवं शील ही उसका श्रृंगार है। निम्न साखी इसका निदर्शन है, यथा –

सीलवन्त लज्जा भरी, बिन नम्बोल मुख लाल।
नितानन्द हर उस बसै, हय पतिव्रताचाल।।[12]

सन्त नितानन्द जी ने अनेक उन पतित नारियों के भी विवरण प्रस्तुत किए है जो भक्त–नारियाँ बन गई हैं। वे सब उनके लिए प्रणम्य एवं वंदनीय हैं। उपर्युक्त विवेचन से सन्त नितानन्द जी की नारी विषय धारणा पूरी तौर पर स्पष्ट हो जाती है। नारी के कामिनी रूप को यदि इन्होंने गर्हित समझा तो पुरुष के कामी रूप को भी इन्होंने अत्यन्त घृणित माना है।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. सन्त साहित्य : पुनः मूल्यांकन : राजदेव सिंह, पृ. 181
2. गुरुग्रन्थ साहिब : एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण, मनमोहन सहगल, पृ. 595
3. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 5, पृ. 173
4. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 6, पृ. 173
5. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 83, पृ. 182
6. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 104, पृ. 182
7. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 124, पृ. 184
8. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 6, पृ. 90
9. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 23, पृ. 92
10. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 52, पृ. 95
11. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 99, पृ. 99
12. सत्य–सिद्धान्त– प्रकाश, सा. 90, पृ. 98

ROLE OF INDIAN INVESTORS IN INDIAN STOCK MARKETS

Dr. Suman Ahlawat
Associate Professor(English)
Government PG College, Sector 9,Gurugram, Haryana

Abstract

Indian investors play an extremely significant role in the Indian stock markets. The changes that have occurred in the last 15 years changed the whole outlook and functioning of the Indian stock market. Various policy changes, technology shifts, stringent compliance norms and transparency have boosted the Indian investors' confidence and willingness to participate in the stock markets. The present study focuses on how the participation of Indian investors has changed and will change their role in the Indian stock markets.

Key-Words : Indian Stock Markets, Indian Investor, Equity Investment, Household Savings

It is a well-known fact that the financial markets have been a long – standing determinant in the overall economic development of any country. Stable and mature capital markets, both primary and secondary, create efficient capital raising opportunities for companies and also assist in channelizing domestic savings towards capital formation. Uncertain outlook for the global economy has further amplified the importance of Indian investors to finance our country's GDP growth.

The Indian stock market has come of age and has substantially aligned itself with the global order. Today, we have one of the most modern securities market among all the countries in the world. However the development of capital markets poses its own challenges. If not managed properly, rapid growth can make the markets vulnerable to fraud, volatility, excessive speculation and misuse by select parties. Capital markets ride on the savings of small and often uninformed retail investors, directly or indirectly. For policy makers, the challenge hence is to strike a balance between the pace of growth and conservatism to ensure transparency and robustness in growth.

The Indian capital markets have evolved dramatically over the last two decades. But we have a long way to go. The total market cap of all the Indian companies is nearly 65% of the GDP today as compared to the USA at nearly 90% and UK at about 150%. Even starker, the total Debt Capital Market in India is only 34% of GDP as compared to China at 49% and USA at 177%.

India has a very high household savings rate. If one was to segment the savings, nearly 50% of all the savings is in physical assets like real estate and gold, with the remaining 50% in financial assets, of which equity (both direct and through mutual funds) is a small percentage, just less than 4% of total household savings.

An important feature of the development of stock market in India in the last two decades has been the growing participation of institutional investors, mainly Foreign Institutional Investors (FIIs). But the investment made by FIIs is not very long term in nature (except investments by foreign pension funds etc.) , it continuously search for better returns and if any other country or region is in a position to give better returns, they reduce investments in India and move their investments to that region. Following are the figures for last 23 years :

FII investment details (in INR crores)

Financial year	Equity	Debt	Total
1992-93	13	0	13
1993-94	5127	0	5127
1994-95	4796	0	4796
1995-96	6942	0	6942
1996-97	8546	29	8575
1997-98	5267	691	5958
1998-99	-717	-867	-1584
1999-2000	9670	453	10122
2000-01	10207	-273	9933
2001-02	8072	690	8763
2002-03	2527	162	2689
2003-04	39960	5805	45765
2004-05	44123	1759	45881
2005-06	48801	-7334	41467
2006-07	25236	5605	30840
2007-08	53404	12775	66179
2008-09	-47706	1895	-45811
2009-10	110221	32438	142658
2010-11	110121	36317	146438
2011-12	43738	49988	93726
2012-13	140033	28334	168367
2013-14	79709	-28060	51649

Looking at the figures it is evident that Indian capital markets are heavily dependent on FII money. The role of Indian investors become more relevant in such circumstances. They can play a vital role in making our capital markets more self reliant so that proper balance can be maintained. To do so it is important that investment in capital markets should be increased and equity culture is promoted among Indian investors. A brief understanding of factors, to increase Indian investors participation in the Indian capital markets are set out below :

PROTECTION OF INVESTORS RIGHTS

A strong investor protection regime goes a long way in limiting the abuse by corporates.The investor protection regime in India India has its basis in the establishment of SEBI, as is evident from the preamble to the SEBI Act, 1992, which states that SEBI was established with the primary goal of investor protection. Disgorgement of ill- gotten gains in 2006 IPO scam by SEBI is an important milestone in this area. The recent Sahara order is also of significance where Supreme court has directed Sahara to refund INR 24000 crores raised by two of its group companies without compliance with the public issue process.

Apart from the above investor awareness program are also frequently undertaken by the regulator, exchanges and other institutions, to build stronger foundations for investor protection and education in the Indian markets. Recently, SEBI has also sought to offer additional protection to retail investors by proposing a mandatory safety net mechanism for

specified securities in public issues. The SEBI (framework for rejection of draft offer documents) order, 2012 entitles SEBI to weed out undesirable or ineligible public offers.

CORPORATE OWNERSHIP STRUCTURE

It is fairly common in India for large corporate groups, with a wide network of businesses and inter-linked structures to remain controlled by a small group of persons. To ensure transparency from a corporate governance perspective, especially in such companies, Indian law has put in place a number of checks and balances. For instance, the Companies Act requires every director of a company to make disclosure of the nature of his concern or interest in a contract or arrangement (present or proposed) entered by or on behalf of a company. A significant step in this regard was also taken by introduction of independent directors in India. Based on the recommendations of Kumar Mangalam Birla committee, clause 49 was incorporated in the listing agreement, which enshrined the basics of independence of directors. It noted that independence of the board is critical in ensuring that the management fulfils its oversight and role objectively and holds itself accountable to the shareholders.

CORPORATE TRANSPERENCY

Corporate transparency enables informed decision making by investors and can be achieved by mandating adequate disclosures from companies. Ranging from disclosures in offer document for accessing public funds, up until disclosures on an on-going basis about material events, financial performance, insider trading and take over code, filing etc., sea changes has been brought about in the disclosure regime in India and it is now comparable to the best, globally. Besides information dissemination, corporate transparency has also been achieved and made effective by electronic portals like MCA21 as well as websites of stock exchanges, which have not only simplified filing but also made access to data simpler and more efficient.

ENHANCING INVESTORS AWARENESS

The lack of awareness or the amount of ignorance about capital markets in India is incredible. Among the households (89%) that did not invest in the capital markets (as per SEBI survey), nearly 41% felt that they had inadequate information about financial markets and lacked investment skills. This perception was prevalent across various income groups and education categories. In addition, a stunning 16.5% of the most educated and 16% of the upper middle and upper income groups thought that investments in the capital markets were not safe. It is this ignorance that needs to be addressed.

CREATING A VALUE PREPOSITION FOR THE INVESTORS THROUGH PRODUCTS AND PERFORMANCE

The next factor that needs to be looked at is that of a clear value proposition for investors. And this has to address two simple levers – (i) performance/ returns ; and (ii) meeting a specific customer need. While the base product is equity, there are multiple product variants – growth versus value equity, ETFs versus actively managed equity funds, SIPs versus lump sum investments, portfolio managed services (PMS) and structured products. And in each of these cases, the important element of the proposition has to be performance / returns commensurate with the risk that the customer is taking. This obviously pre- supposes a certain base investor awareness.

ENSURING AN ACTIVE AND PROESSIONAL DISTRIBUTION NETWORK

The Indian market today has three key distribution channels for equity mutual funds and direct equity- distributors, banks and independent financial advisors. With recent regulatory changes large distributors with scale and negotiation ability have negotiated better terms and are in a position to survive. Going forward, banks and distributors will evolve to meet customer requirements. But it is more an evolution than a revolution.

FAVOURABLE TAX REGULATIONS

The tax regime has always been favourable for equity investments – both direct and mutual funds. This is going to have to continue, because India really needs the risk capital. In summary, while the market has evolved significantly over the past decades, it is as always a case of the glass half full versus the glass half empty. India has a long journey to continue. It will need multiple entities , SEBI, Ministry of Finance, AMCs , industry bodies etc to work together on multiple fronts, else the pot of gold will remain elusive.

INTRODUCING BONDS WITH TAX INCENTIVES

It is clear from the data given in earlier point that Indians are great savers but poor investors. Increased allocation to physical savings is also proving the point that financial savings probably have not given adequate real return to Indian households. Inadequate real return on financial savings is mostly hitting the retail investors. Corporate bonds can provide adequate real returns to investors. Historically, bonds having tax benefits have been introduced by the central government for domestic investors and entities permitted have included a select group of public sector entities or NBFCs in the infrastructure finance sector.

In 2010 a new section 80CCF was introduced under the IT Act that provided income tax deduction of INR 20000 in addition to INR 100000 available under other provisions at that time for claiming tax deductions for investments made in the long term infrastructure bonds. 80 CCF bonds should be re-introduced with modifications such as increased no. of eligible issuers, broader base of domestic investors.

INCREASED RETAIL INVESTMENT IN CORPORATE BONDS

Inarguably, the development of the corporate bond market is the key to the creation of a mechanism to finance corporate and infrastructure projects and, thereby, lower the dependence on banks. In addition to focus on the institutional segment, there should also be a concerted effort to attract retail investments into the debt markets. The Indian investors has historically shown a preference to guaranteed return products such as bank deposits. Given the retail investors appetite for guaranteed return products, corporate bonds and money market instruments such as CPs and CDs represent competitive alternatives along with bank deposits. Retail investments through these avenues would also do well to broaden the markets. Products from indirect channels such as mutual funds are simple and efficient vehicles for participation in these markets as well. They offer products across investor needs such as liquidity, capital appreciation, flexibility, target maturity etc. which help investors plan their finances better.

CONCLUSION

The Indian stock markets have really come of age, changes in the last two decades have made the markets global in nature and working. Indian markets are heavily dependent on FIIs and to reduce its dependence Indian investors participation needs to be increased multi fold. In order to do so households need to divert their savings from physical assets to financial assets. Indian investor is and will become a force to reckon with by improving upon various factors as discussed in this paper.

REFERENCES

Indian Securities Markets Review 2014, NSE Mumbai

Report of High Level Committee on Financial Sector Reforms, September 2008
SEBI website : www.sebi.gov.in

Durnev, Art, et al, (2004) "Capital Markets and Capital Allocation: Implications for Economies of Transition", Vol. 12 (4), 593-634

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रिका
खंड–11, अंक–44, वर्ष–2022 (मार्च, 2022) आईएसएसएन : 2320–2467, आईएफः 5.4

बाल अपराध – परिवार एवं साथी समूह की भूमिका

डॉ. हेमलता माहवार
एसिस्टेंट प्रोफेसर
सामाजिक विज्ञान विभाग
महाराणा प्रताप, सरकारी पीजी कॉलेज,
छत्तीसगढ़, राजस्थान

सार संक्षेप –

जब किसी बच्चे द्वारा कोई कानून–विरोधी या समाज विरोधी कार्य किया जाता है तो उसे बाल अपराध कहते हैं। इस आधार पर किसी भी राज्य द्वारा निर्धारित आयु सीमा के अन्तर्गत बालक द्वारा किया गया कानून विरोधी कार्य बाल अपराध की श्रेणी में आता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से बाल अपराध में समाज एवं साथी समूह की भूमिका को अति महत्वपूर्ण माना गया है और बालक के असामाजिक व्यवहारों को इस श्रेणी में लिया गया है। जिस परिवार में माता–पिता या परिवार के अन्य सदस्य अनैतिक कार्य करते हैं, ऐसे परिवार के बच्चों का झुकाव अपराध की ओर बढ़ जाता है। उसी प्रकार बालक के मित्र अच्छे हैं तो बालक अच्छी आदतें सीखता है और बुरे हैं तो उन बुरी आदतों को सीख जाता है।

प्रस्तावना –

वर्तमान समय में अपराधी–व्यवहार के क्षेत्र में जिन समस्याओं को सर्वाधिक महत्व दिया जा रहा है, उनमें बाल अपराध की समस्या प्रमुख है। बाल अपराध की समस्या एक सामाजिक समस्या ही नहीं अपितु मनोवैज्ञानिकों के लिए भी गंभीर विचार का प्रश्न बनी हुई है। विश्व के समस्त देशों में बाल अपराध में निरन्तर वृद्धि हो रही है। जब समाज एवं देश की विकास की बात हो रही हो, तब यह समस्या हमारे विकास के रास्ते अवरुद्ध कर देता है। आयु की दृष्टि से 18 वर्ष तक की आयु में अपराध करने वाले बालक को बाल अपराधी माना गया है, जिसे किसी कानून का उल्लंघन करने पर न्यायिक कार्यवाही के लिए बाल–न्यायालय के समक्ष उपस्थित किया जाता है। जब किसी बच्चे द्वारा कोई कानून–विरोधी या समाज विरोधी कार्य किया जाता है तो उसे बाल अपराध कहते हैं। इस आधार पर किसी भी राज्य द्वारा निर्धारित आयु सीमा के अन्तर्गत बालक द्वारा किया गया कानून विरोधी कार्य बाल अपराध की श्रेणी में आता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से बाल अपराध में समाज एवं साथी समूह की भूमिका को अति महत्वपूर्ण माना गया है और बालक के असामाजिक व्यवहारों को इस श्रेणी में लिया गया है। जिस परिवार में माता–पिता या परिवार के अन्य सदस्य अनैतिक कार्य करते हैं, ऐसे परिवार के बच्चों का झुकाव अपराध की ओर बढ़ जाता है। उसी प्रकार बालक के मित्र अच्छे हैं तो बालक अच्छी आदतें सीखता है और बुरे हैं तो उन बुरी आदतों को सीख जाता है। एक बालक को अपराधी तभी माना जाएगा जब वह ऐसे कार्य के लिए दोषी माना जाए जिससे एक समूह या समाज को हानि पहुँचे तथा इसके विरूद्ध कानूनी कार्यवाही करना आवश्यक हो।[1] **(वी. रीता – 2010)**

प्रत्येक समाज में सांस्कृतिक आदर्शों के अनुरूप मान्य–व्यवहार होते हैं।यह व्यवहार समाज के सांस्कृतिक आदर्शों की प्राप्ति एवं सामाजीकरण में सहायक होते हैं और इन्हीं के द्वारा समाज का संतुलन बना रहता है, लेकिन जब बालक इन सामाजिक प्रतिमानों के विरुद्ध आचरण करने लगता है या उनके कार्यों से किसी भी प्रकार से हिंसा या किसी भी प्रकार की समस्या उत्पन्न हो रही हो तो इसे सामाजिक विचलन माना जाता है, जिससे सामाजिक संतुलन डगमगाने लगता है और बालक अपराध की ओर अग्रसर होने लगते हैं। उनके इस अपराध में परिवार एवं उनके साथी समूहों की विशेष भूमिका रहती है, क्योंकि बालक की प्रथम पाठशाला परिवार एवं साथी समूह ही होता है। बालक को अपराध की ओर धकेलने में एक ही कारक प्रभावी नहीं होता, यह उन परिस्थितियों पर भी निर्भर करता है जब कोई बालक प्रभावित हो कर अपराधी व्यवहार करने लगता है। (राम आहूजा – 2000)

परिवार –

बच्चों को आवश्यकता से अधिक लाड़–प्यार या अधिक अनुशासन में रखना दोनों ही अवस्था में बालक के कुसमायोजित होने की आशंका होती है। (मंजू कुमारी – 2000)

परिवार एक सामाजिक संस्था के साथ ही कार्यात्मक इकाई भी है। बालक की सभी आवश्यकताएँ परिवार में ही पूर्ण होती है। परिवार ही अपने सदस्यों के मूल्यों का निर्धारण करता है एवं बालक में आदर्श नागरिक, एक सामाजिक प्राणी बनाने में सहयोग करता है। यदि किसी कारणवश परिवार अपनी भूमिका ठीक प्रकार से नहीं निभा पाता तो बालक में निराशा एवं असंतोष की भावना उत्पन्न हो जाती है और उनका सांवैगिक संयोग बिगड़ जाता है। फिर बालक के मन में परिवार का महत्व कम होने लगता है। परिवार के मूल्य, आदर्श एवं प्रतिमान आदर्शहीन लगने लगता है और इसी निराशा के रहते बालक का व्यवहार परिवर्तित होने लगता है, बालक को इन सबके विरुद्ध कार्य करना अच्छा लगने लगता है और यहीं से अपराध का जन्म होता है। बालकों को उनके अभिभवकों के नियंत्रण में रखना उनको अपराधिक बनाने मदद करता है।[4] (वाकर निगल – 1973)

साथी–समूह –

बालक के व्यक्तिव के विकास में परिवार के बाद दूसरा सहायक समूह उसके साथी–समूह होते हैं, जहाँ वे साथियों साथ खेल के अलावा अपने अनुभवों को भी साझा करते हैं। बालक की उम्र बढ़ने के साथ ही साथ उनके साथियों की संख्या में भी वृद्धि होने लगती है। साथी–समूह का व्यवहार, विचार एवं उनके द्वारा किया गया कार्य बालक पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। यदि साथी समूह के बालकों में वैचारिक मतभेद हो तो भी वह बालक मन को प्रभावित करता हैं। साथी–समूह स्वार्थ के लिए दोषपूर्ण प्रतिमान को अपना आदर्श बनाते हैं तो यहाँ बालक भी उनका आचरण करने लगता है और जब इसमें उनको आनंद आने लगता है या स्वार्थ की पूर्ति होने लगती है तो बालक उस आचरण की पुनरावृत्ति करने लगता है और यहीं से अपराध का जन्म होने लगता है। साथी–समूह में यदि किसी को किसी प्रकार की बुरी आदत है तो इसे भी बालक आसानी से सीख जाता है। बालक अपराधी समूहों के साथ जितना अधिक घनिष्ठ संबंध बनाएगा, वह अपने व्यक्तित्व में अपराधिक गुणों को उतना ही आत्मसात करेगा।[5] (सिंह एस.डी. – 2001)

परिवार में प्रेम से वंचित रहने के कारण बालक बड़ा होकर अपराध एवं नशे की लत की ओर आकृष्ट हो जाता है।[6] (सदरलैंड – 1965)

उद्देश्य –

बाल–अपराध में परिवार एवं साथी – समूहों की भूमिका को ज्ञात करना।

न्यादर्श –

यह शोध पत्र प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित है। इस शोध–पत्र में दुर्ग शहर के पुलगाँव स्थित बाल सम्प्रेक्षण गृह के 40 बाल अपराधियों को लिया गया है। यहाँ पर दुर्ग, राजनांदगाँव, कवर्धा के न्यायालय से चिन्हित बाल अपराधियों को रखा गया है। इनमें चोरी करने वाले अपराधी अधिक हैं।

आँकड़ों का विश्लेषण –

अ) परिवार की भूमिका –

1. माता–पिता से व्यवहार – 80ः ने माता–पिता से अच्छा व्यवहार नहीं होना बताया।
2. परिवार में तनाव – 76ः ने बताया कि परिवार में तनाव रहता था।
3. भाई–बहनों से संबंध – 60ः ने भाई–बहनों से सामंजस्य न होना बताया।
4. घर में समायोजन– 68ः ने घर पर किसी से भी समायोजन का न होना बताया।
5. आवश्यकताओं की पूर्ति – 85ः ने बताया कि उनके आवश्यकताओं की पूर्ति उनके परिवार में नहीं होती है।
6. परिवार में सुरक्षा एवं प्रेम –62ः ने बताया कि उन्हें परिवार में सुरक्षा एवं प्रेम प्राप्त नहीं होता।
7. परिवार का समय – 65ः ने बताया कि परिवार वालों के पास उनके लिए समय नहीं है।
8. पक्षपात – 70ः ने अपने साथ भेद–भाव होना बताया।
9. पारिवारिक अनुशासन – 75ः ने पारिवारिक अनुशासन को कठोर बताया एवं अवहेलना की।

10. शिक्षा का अभाव – 81ः ने बताया कि परिवार द्वारा उनकी शिक्षा व्यवस्था पर ध्यान नहीं दिया गया।

ब) साथी–समूह –

1. मित्रों की संख्या – 90ः ने 5 से अधिक मित्र होना बताया।
2. मित्रों की शिक्षा – 87ः बालकों के मित्रों की शिक्षा प्रायमरी एवं माध्यमिक तक ही है।
3. शाला का वातावरण – 86ः ने अपने शाला के वातावरण को असामंजस्यपूर्ण एवं अरूचिकर बताया।
4. साथी–समूह का आचरण – साथी–समूह का आचरण जानने पर 65 बालकों ने बताया कि उनके साथियों में किसी न किसी प्रकार की बुरी आदत थी।
5. बुरी आदतें – बुरी आदतों में चोरी करना, बीड़ी सिगरेट पीना, घर से भागना, मार–पीट करना आदि बुरी आदतें साथी–समूहों में थी ।
6. बुरी आदतें कब से – 55ः बालकों ने बुरी आदतें परिवार से एवं 45ः बालकों ने साथी समूहों से बुरी आदतों का होना बताया।
7. साथियों के साथ समय – 81 ने बताया कि वे अधिकांश समय मित्रों के साथ व्यतीत करते थे।
8. साथी समूहों के साथ अपराध – 72 ने अकेले एवं 28 ने अपने साथियों के साथ मिलकर अपराध करना स्वीकार किया।
9. साथियों से सामंजस्य – 78 ने अपने साथियों के साथ मार–पीट करना बताया।
10. भविष्य के बारे में जानना – 64 ने अपने भविष्य को सुधारने की बात कही । 36 ने बताया कि उन्हें अपने काम में ही आनंद आता है।

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बाल अपराध में परिवार एवं साथी समूहों दोनों की भूमिका रहती हैद्य यदि परिवार अच्छा है लेकिन बालक का साथी समूह अच्छा नहीं है तो बालक बुरी आदत सीख जाता है और यदि साथी समूह अच्छा है लेकिन पारिवारिक माहौल या सामाजीकरण ठीक नहीं हुआ है तो भी बालक आपराधिक प्रवृत्ति अपना लेता है, क्योंकि अपराधी जन्मजात नहीं होते। कुछ बाल अपराधी अपने परिवार के दूषित वातावरण, असामंजस्य, पक्षपात, कड़ा अनुशासन, शिक्षा का अभाव, परिवार में तनाव, आवश्यकताओं के पूर्ण न होने के कारण इस क्षेत्र में आए हैं तो कुछ गलत संगत में पड़कर अपराध करने लगे हैं। आँकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि बाल अपराध में परिवार एवं साथी समूह दोनों की बराबर भागीदारी रहती है।

सुझाव –

बालक के विकास एवं आदत निर्माण में परिवार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। प्रत्येक परिवार को अपने बच्चों को पारिवारिक आदर्श, सांस्कृतिक मूल्य, प्रतिमान एवं नैतिकता की शिक्षा देनी चाहिए। अपने बच्चों में सामंजस्य स्थापित करने की कला सिखानी चाहिए। उनके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार के साथ ही उनके दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति अपने परिस्थिति के अनुसार करना चाहिए। परिवार के सदस्यों को आपस में समय बिताना आवश्यक है। बालक के मित्रों पर भी नजर रखना अनिवार्य है कि बालक के साथी समूह कैसे हैं। कहीं वे बालक को किसी भी प्रकार के गलत आचारण करना तो नहीं सिखा रहे हैं। उन्हें घर से अधिक मित्रों के साथ अच्छा लगने लगे तो यह आवश्यक हो जाता है कि बालक के मित्रों पर एवं बालक पर नजर रखें। इस प्रकार से उचित पारिवारिक वातावरण एवं सही मित्रों के चयन से बाल अपराध को कम किया जा सकता है।

संदर्भ –

1. वी. रीता (2010) : "विधानेतर बाल अपराध का समाजशास्त्र" काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
2. आहूजा राम (2000) : अपराधशास्त्र, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
3. कुमारी, मंजु (2000) : "भारत में बाल अपराध" प्रिन्टवैल पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर।
4. वाकर, निगल (1973) : ब्रिटेन में अपराध और सजा, ब्रिटेन विश्वविद्यालय प्रेस।
5. सिंह एस. डी. (2001) : अपराधशास्त्र के सिद्धांत, कमल प्रकाशन, इंदौर।
6. सदरलैंड (1965) : प्रिंसिपल ऑफ क्रिमनोलॉजी, राइट्स ऑफ इंडिया प्रेस बॉम्बे।